264

१ੴ वाहिगुरू जी की फतहि ॥

जीवन गाथा और वृतांत

श्री गुरू रामदास जी

गुरदुआरा चुन्ना मण्डी, लाहौर (पाकिसतान)

जन्म अस्थान श्री गुरू रामदास जी

15 रुपये

सिख मिशनरी कालेज (रजि:)

लुधियाना

੧ੳ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀ ਫ਼ਤਹਿ॥

जीवन गाथा और वृतांत श्री गुरु रामदास जी

लेखक:

स: कृपाल सिंघ चन्दन

अनुवादक :

स: कुलबीर सिंघ, नई दिल्ली

प्रकाशक

सिख मिशनरी कॉलेज (रजि:)

1051, कूचा 14, फील्ड गंज, लुधियाना - 141008, फोन : 663452

दिल्ली सब आफिस : A-143, फतहि नगर, नई दिल्ली - 110 018, फोन-5135677

जालन्धर सब आफिस : W.G.-578, सुराज गंज, जालन्धर-144001, फोन : 236947

(1) भट्टां की श्रद्धांजलि

सिख गुरू साहिबान के आत्मिक बल, उच्च आत्मिक अवस्था, तपते हुए संसार का उद्धार करने के लिए किए गए कार्यों, समाज पर उन की शिक्षाओं और यत्नों के प्रभाव, सिख लहर को दिए गए मार्गदर्शन - बात क्या, संपूर्ण व्यक्तित्व के बारे में सही जानकारी, हमें *भट्टां की बाणी,* या फिर भाई गुरदास जी व भाई नंद लाल जी की बाणी से मिलती है।

भट्ट वे महापुरुष थे, जिन्होंने सत्य की और सच्चे व निर्मल धार्मिक अग्रणियों की खोज में, हिंदुस्तान का कोना-कोना छान मारा था। उनको कभी तथाकथित साधु-संतों, धार्मिक अग्रणेताओं के दर्शन तो जरूर हुए थे, पर वे सब कथनी के शूर व करनी के शून्य ही थे। इन *भट्टां* में से महापुरुष भिखे ने हमारे इस कथन का वर्णन निम्नांकित शब्दों में किया है :

रहिओ संत हउ टोलि, साध बहुतेरे डिठे।।
संनिआसी तपसीअह, मुखहु ए पंडित मिठे।।
बरसु एकु हउ फिरिओ, किनै नहु परचउ लायउ।।
कहतिअह कहती सुणी, रहत को खुसी न आयउ।।

(सवईए, महले तीजे के, पृ १३९५)

ये सत्य के राही, जब गुरू अर्जुन पातशाह के दरबार में पहुंचे तो उनको एक ऐसा रहबर मिल गया जो खुद प्रभु से जुड़ा हुआ था और दूसरों को जोड़ रहा था। जिस की कथनी और करनी में समानता थी। बस फिर क्या था। भट्टां के यत्नों को फल लगे। उनकी खुशी का कोई अंत न रहा। उन के पवित्र मुख पर, सिख गुरू साहिबान के प्रति प्यार, श्रद्धा और भक्ति के बोल, झरने की भांति अपने आप झरने लगे। इन वचनों को आज हम *भट्टां दे सवॅये* कहते हैं।

दैवी भट्टों ने पहले पांच गुरू साहिबान की उपमा में बाणी उचारी। चौथे पातशाह, साहिब श्री गुरू रामदास जी की स्तुति करते हुए वे कहते हैं कि

अनुवाद : स. कुलबीर सिंघ, नई दिल्ली/अगस्त 2000

सतगुरू जी ने गुरू अमरदास जी और सिख संगत की सेवा करके उच्च पद प्राप्त किया है - गुरू नानक पातशाह की गद्दी पर बिराजमान हुए हैं, पांच-विकारों को नियंत्रित किया है और स्वयं संयमी, सिदकवान, सत्य-संतोख के धारणकर्ता और मृदुल स्वभाव वाले हैं। उन्होंने (गुरू रामदास जी ने) हरी का सुमिरन किया है, उसे मन में बसाया है, नामरस का आनंद लिया है और हरी-रूप हो गए हैं। वे नाम का चश्मा हैं, जिस में से संतजन नाम रस पीते हैं। आप गोबिंद के गुणों के ग्राहक हैं और आप ने लोगों के हृदय रूपी खाली सरोवरों को नामजल द्वारा भर दिया हैं। आप समदृष्टि वाले, निर्भय क्षमादान करने वाले हैं, मौत का भय दूर करने वाले हैं, आत्मिक अडोलता प्रदान करने वाले हैं। आपने हरि की पदवी प्राप्त कर ली है और हरि का आदेश चला रहे हैं। आपको किसी सलाहकार की जरूरत नहीं। आप ज्ञान की निधि बांट रहे हैं। लोगों के मनों में अहंकार और अन्य विकारों को समाप्त करने वाले हैं। लोगों को शबद से जोड़कर संसार सागर से पार कर रहे हैं। रिद्धियां-सिद्धियां उनके चरण पलोस रही हैं। उनके दर्शन करने से विकार भाग जाते हैं और सभी धर्मों-कर्मों के फल प्राप्त हो जाते हैं। आप राज योगी हैं। सच्चा-पातशाह हैं और जनक-राज के मालिक हैं.....आदि।

भट्ट-कवियों ने श्री गुरू रामदास जी के बारे में जो विशेष बातें कही हैं, वे उन की बाणी में इस प्रकार दर्ज हैं।

(क) **गुरू जी नाम में रते हुए हैं और नाम के सरोवर हैं :**

हरि नाम रसिकु, गोबिंद गुण गाहकु, चाहकु तत, समत सरे।।
कवि कलः, ठकुर हरदास तने, गुर रामदास सर अभर भरे।।

(पृ १३९६)

अर्थ : हे कल:सहार कवि ! ठाकुर हरिदास के सपुत्र, गुरू रामदास जी, हृदय रूपी खाली सरोवरों को नाम-जल से भरने वाले हैं। वे अकाल पुरख के नाम के रसिया हैं, गोबिंद के गुणों के ग्राहक हैं, अकाल पुरख से प्यार करने वाले और समदृष्टता के सरोवर हैं।

छुटत परवाह अमिअ अमरा पद, अमृत सरोवर सद भरिआ।।
ते पीवहि संतु करहि मन मजनु, पुब जिनहु सेवा करीआ।।

(पृ १३९६)

अर्थ : गुरू रामदास अमृत का सरोवर है, जो सदा भरा रहता है और जिस में से अटल पदवी देने वाले अमृत के चश्मे चल रहे हैं। इस अमृत को वे संतजन पीते हैं और अंतर-आत्मा में स्नान करते हैं जिन्होंने पूर्व जन्म की कोई सेवा की हुई है।

निरमल नामु सुधा परपूरन, सबद तरंग प्रगटित दिन आगरु।।
गहिर गंभीरु अथाह अति बड, सुभरु सदा सभ बिधि रतनागरु।।
संत मराल करहि कंतूहल, तिन जम त्रास मिटिओ दुख कागरु।।
कलजुग दुरत दूरि करबे कउ, दरसनु गुरू, सगल सुख सागरु।।
(पृ १४०४)

अर्थ : (गुरू रामदास एक ऐसा सरोवर है) जिस में परमात्मा का पवित्र नाम अमृत भरा हुआ है। उस में अमृत बेला के शबद की लहरें उठती हैं, यह सरोवर बहुत गहर-गंभीर तथा असीम गहरा है। सदा ऊपर तक भरा रहता है और सभी रत्नों का खजाना है। इस में संत-हंस क्रीड़ा व कलोल करते हैं। उनका यमों का भय व दुखों का लेख मिट गया होता है। कलियुग के पाप दूर करने के लिए सतगुरू जी का दर्शन सारे सुखों का समुद्र है।

(ख) **सतगुरू आत्मिक-गुणों वाले व हरी के रूप हैं :**

मति माता, संतोखु पिता, सरि सहज समायउ।।
आजोनी संभविअउ, जगतु गुर बचनि तरायउ।। (पृ १३९७)

अर्थ : ऊंची मति (गुरू रामदास जी की) माता है और संतोष पिता है। आप शांति के सरोवर में डुबकी लगाए रखते हैं। आप योनियों से रहित और स्वतः प्रकाशमान हरी का रूप हैं। संसार को आपने सतगुरू के वचनों यानी बाणी द्वारा विकारों के सागर से पार कर दिया है।

सतिगुर मति गूढ़ बिमल सतसंगति, आतमु रंगि चलूलु भया।।
जागाः मनु, कवलु सहजि परकासाः, अभै निरंजनु घरहि लहा।।
(पृ १३९६)

अर्थ : गुरू रामदास जी की मति गहर-गंभीर है। उनकी निर्मल सतसंगत है और उनकी आत्मा हरी के प्रेम में प्रगाढ़ है। सतगुरू जी का मन जागृत है। उनके हृदय का कंवल फूल आत्मिक अडोलता में खिला हुआ है और उन्होंने निर्भय हरी को अपने हृदय में ही पा लिया है।

मोहु मलि बिवसि कीअउ, कामु गहि केस पछाड़ःउ।।
क्रोधु खंडि परचंडि लोभु अपमान सिउ झाड़उ।। (पृ १४०६)

अर्थ : हे गुरू रामदास जी ! आपने मोह को नियंत्रित कर लिया है और काम को पकड़ कर धरती पर पटक दिया है। आपने क्रोध को अपने तेजस्व व प्रताप से टुकड़े-टुकड़े कर दिया है और लोभ को अपमानित कर दुत्कारा कर दूर किया हुआ है।

परतखि देह पारब्रहमु सुआमी आदि रूपि पेखण भरणं।।
सतिगुरु गुरु सेवि, अलख गति जाकी, श्री रामदासु तारण तरणं।।
(पृ १४०१)

अर्थ : जो परमात्मा सभी जीवों का मालिक है, सभी का मूल है, अस्तित्व वाला है, सब का पालनहार है, वह अब प्रत्यक्ष तौर पर गुरू रामदास जी के शरीर में प्रकट तौर पर विद्यमान है। गुरू रामदास जी संसार-सागर को पार लगाने के लिए समुंद्री जहाज की मानिंद हैं। उनकी आत्मिक अवस्था का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनकी ही सेवा करो।

(ग) श्री गुरू रामदास जी के दर्शनों से विकारों से मुक्ति मिलती है, माया से छुटकारा होता है और नाम की प्राप्ति होती है :

जाकउ देखत दरिद्रु जावै, नामु सो निधानु पावै,
गुरमुखि गाःनि, दुरमति मैलु धोवै जीउ।। (पृ १३९८)

अर्थ : श्री गुरू रामदास जी के दर्शन कर लेने से दरिद्रता का नाश हो जाता है और जो गुरमुख, गुरू रामदास जी द्वारा प्रदत्त ज्ञान के द्वारा अपनी दुरमत की मैल धो लेता है, वह नाम का खज़ाना प्राप्त कर लेता है।

जा के देखत दुआरे, काम क्रोध ही निवारे ,
जी हउ बलि बलि जाउ सतिगुर साचे नाम पर।। (पृ १३९९)

अर्थ : (श्री गुरू रामदास जी के पास) नाम रूपी खजाना है। आप की वृत्ति अंतर्मुखी है। आप के तेजस्व का पुंज तीनों लोकों में चमक रहा है। आप के दर्शन करने से भ्रम भटक कर भाग जाता है। दर्शन करने वालों के दुख दूर हो जाते हैं और उन के अंदर आत्मिक अडोलता व सुख प्रकट हो जाते हैं।

(घ) श्री गुरू रामदास जी में गुरू नानक वाली ज्योति है, वह गुरू

नानक की गद्दी पर सुशोभित हैं और उनकी राह पर चल रहे हैं :

गुरू नानकु, निकटि बसै बनवारी।।

तिनि लहणा थापि, जोति जगि धारी।।

लहणै, पंथु धरमु का कीआ।।

अमरदास भले कउ दीआ।।

तिनि सिरी रामदासु सोढी थिरु थपःउ।

हरि का नामु अखै निधि अपःउ।। (पृ १४०१)

अर्थ : गुरू नानक अकाल पुरख के निकट बिराजमान है। उसने लहणा को सम्मान प्रदान कर, संसार में ईश्वरीय ज्योति का प्रकाश किया है। लहणा ने धर्म का राह चलाया और भले गुरू अमरदास जी को नाम की निधि प्रदान की। उसने सोढी रामदास जी को हरी का नामरूप, कभी न समाप्त होने वाला खज़ाना प्रदान किया और उनको सदा के लिए अटल कर दिया।

नानकि नामु निरंजन जानःउ, कीनी भगति प्रेम लिव लाई।।

ता ते अंगदु अंग संगि भंयो साइरु तिनि सबदु सुरति की नीव रखाई।।

गुर अमरदास की अकथ कथा है, इक जीह कछु कही न जाई।।

सोढी, सृस्टि सकल तारण कउ, अब गुर रामदास कउ मिली बडाई।।

(पृ १४०६)

अर्थ : गुरू नानक जी ने निरंजन के नाम को पहचाना। प्रेम के संग अपनी वृत्ति जोड़कर भक्ति की। उन से (गुणों के समुंद्र) गुरू अंगद देव जी हुए, जो सदा उन की हजूरी में टिके और जिन्होंने शबद सुरति की वर्षा की-भाव, शबद का ध्यान धरने की निधि को खुले आम बांटा। गुरू अमरदास जी की कथा का वर्णन नहीं किया जा सकता। मेरी एक जिव्हा है, इस से कुछ कहा नहीं जा सकता। अब सारी सृष्टि का उद्धार करने के लिए (श्री गुरू अमरदास जी द्वारा) सोढी गुरू रामदास जी को महानता प्राप्त हुई है।

(ङ) श्री गुरू रामदास जी राज–योगी (सांसारिक और आध्यात्मिक प्रभुसत्ता के मालिक) हैं :

सिरि आतपतु सचौ तरवतु, जोग भोग संजुतु बलि।।
गुर रामदास सचु सलः भणि,
तू अटलु राजि अभगु दलि।। (पृ १४०६)

अर्थ : हे गुरू रामदास ! आप के सिर पर छत्र है। आप का सिंहासन सदा अटल है। आप राज व योग दोनों का आनंद लेते हैं और बलि हैं। हे सलः कवि ! आप कहो : हे गुरू रामदास, तूं अटल राज्य वाला व नाश न होने वाले (दैवी संपत्ति रूप) सैनिक बल वाला है।

गुरू नानकु अंगदु अमरु भगत हरि संगि समाणे।।
इहु राज जोग, गुर रामदास, तुमः जाणे।। (पृ १३९८)

अर्थ : गुरू नानक देव जी, गुरू अंगद साहिब, गुरू अमरदास जी और अन्य भगत अकाल पुरख में लीन हुए हैं। हे गुरू रामदास जी ! आप ने भी राज जोग (संसार में रहकर प्रभु के संग जुड़ने) के इस आनंद को पहचाना है।

पृथमे नानक चंदु, जगत भयो आनंदु,
तारनि मनुखः जन, कीअउ प्रगास।।
गुर अंगद दीअउ निधानु, अकथ कथा गिआनु,
पंच भूत बसि कीने, जमत न त्रास।।
गुर अमरु गुरू सिरी सति, कलिजुगि राखी पति,
अघन देखत गतु, चरन कमल जास।।
सभ बिधि मानिःउ मनु, तब ही भयउ प्रसंनु,
राजु जोगु तखतु दीअनु गुर रामदास।।४।। (पृ १३९९)

अर्थ : पहले चंद्रमा रूप गुरू नानक देव जी प्रकट हुए। मानवों का

उद्धार करने के लिए उन्होंने मार्गदर्शन व प्रकाश प्रदान किया तो संसार को प्रसन्नता हुई। उन्होंने गुरू अंगद देव जी को प्रभु की अकथ कथा का ज्ञान रूपी खजाना प्रदान किया। गुरू अंगद देव जी ने कामादिक शत्रु पंजे, अपने वश में कर लिए और उनका उन्हें डर न रहा। फिर श्री सतगुरू अमरदास जी ने कलियुग की लाज रखी। आपके चरण कमलों का दर्शन करके पाप भाग गए। जब उन का मन पूर्ण तौर पर पिघल गया तब उन्होंने दया की, और उन्होंने गुरू रामदास जी को राज-योग वाला सिंहासन (गुरगद्दी) प्रदान किया।

सेवक सिख सदा अति लुभित, अलि समूह जिउ कुसम सुबासे।।

बिदःमान गुरि आपि थपःउ थिरु, साचउ तखतु गुरू रामदासै।।

(पृ १४०४)

अर्थ : सेवक व सिख, सदा गुरू जी के चरणों के आशिक हैं, जैसे भंवरे फूलों की वासना के आशिक होते हैं। प्रत्यक्ष गुरू (अमरदास जी) ने स्वयं ही गुरू रामदास जी का सच्चा तख्त, निश्चल रूप में टिका दिया है।

***

(2) जन्म और बचपन

नम्रता की साक्षात मूर्ति, विद्या, कला, कविता और शिल्पकला के प्रेमी दया, प्रेम और उदारता के प्रतीक, राजयोगी, तख्तो-ताज के मालिक सच्चे पातशाह साहिब श्री गुरू रामदास जी का जन्म वर्तमान पाकिस्तान के लाहौर शहर में, चूना मंडी में हुआ था। उस दिन सितंबर के महीने की 24 तारीख थी और सन 1534 था। पिता का नाम श्री हरिदास और माता का नाम दया कौर (अनूपी) जी था। ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण अड़ोसी-पड़ोसी व संबंधी इनको जेठा-जेठा करके बुलाया करते थे। इस तरह इनका नाम ही जेठा जी पड़ गया।

जब गुरू रामदास जी का जन्म हुआ, उस समय गुरू नानक देव जी साढ़े 65 वर्ष के थे। भाई लहणा जी (गुरू अंगद देव जी) 30 वर्ष के और (गुरू) अमरदास जी साढ़े 55 वर्ष के थे। अत: तब चारों गुरव्यक्ति एक ही समय पर मौजूद थे। बाबा लहणा जी को गुरू नानक देव जी की शरण में आए अभी दो साल ही हुए थे।

हरिदास जी छोटी-मोटी दुकानदारी ही करते थे जिस से मामूली आय ही होती थी। वे नाम के ही हरिदास नहीं थे, बल्कि सचमुच ही प्रभु के भगत थे - देवी-देवताओं को बिल्कुल नहीं मानते थे। स्वभाव बहुत मृदुल ? और संतोषी था। थोड़ी सी आय में ही संतुष्ट थे। जरूरतमंदों की सेवा करके आत्मिक आनंद प्राप्त करते थे।

जेठा जी के जन्म के दो साल के बाद हरिदास जी के घर दूसरे पुत्र का जन्म हुआ। इसका नाम हरिदयाल रखा गया। उस के बाद एक लड़की ने जन्म लिया। इसको रमदासी कह कर पुकारा जाता था। हरिदास जी की संतान के बारे में भाई केसर सिंघ (छिब्बर) ने बंसावली नामा में इस प्रकार लिखा है:

रामदास हरिदिआल सोढी दुइ भाई।।
इक बीबी रमदासी सकी भैण कहाई।।

बालक रामदास जी (जेठा जी) का दर्शन करने पर मन को शीतलता प्राप्त होती थी। देखने को अति सुंदर थे, गोरा शरीर, मोटे नयन-नक्श और

चौड़े माथे वाले थे। **मैकालिफ** के कथनानुसार आप सुंदर व सुडौल थे और हमेशां खिले रहते थे।

He (Jetha) is described as of fair complexion, handsome figure, pleasing and smiling face, and not disposed to weep or cry in the manner of ordinary children !

प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ के कथनानुसार :

''स्वच्छ वातावरण में पलने के कारण (आप की) मति अति सूक्ष्म थी। प्रभु के संग बचपन से ही प्यार था। अडोल चित्त, धैर्यवान, धर्म स्वरूप थे। लोगों को देने और बांटने की वृत्ति बालपन से ही थी। आने-जाने वाले साधु, संत, महात्मा या फकीर जो भी देखते, उसे घर ले आते या उसकी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए पिताजी को कहते। पंथ प्रकाश में *बाल उमर बृधन सी चाले* के शब्द से इन्हें संबोधित किया गया है।

जब बच्चों के साथ खेलते, तो भी भक्तिभाव की बातें करते और प्रभु के साथ मन लगाने को प्रेरित करते।

खेलन बीच बालकन ताईं।।
उपदेसै भगती जग साईं।।

हंसते-खेलते बालक जेठा जी का वास्ता दुखों और गरीबी से पड़ गया। अभी बहुत ही छोटी आयु के थे कि माता जी का देहांत हो गया। 7 साल की आयु में सन 1541 में, पिता का साया भी सिर से जाता रहा। संसारी तौर पर यह एक असहय चोट थी। एक छोटे भाई व छोटी बहन का भार भी सिर पर था, पर आप अविचलित रहे।

आप जी के ननिहाल, जिला अंमृतसर के गांव बासरके में थे। पिता जी की मृत्यु के पश्चात आप के नानी जी लाहौर आए। आपको व आपके छोटे भाई व बहन को बासरके ले आए। माता-पिता की मृत्यु के पश्चात लाहौर छोड़ने की याद, गरीबी की देन - कठिनाइयों व मुसीबतों व रोजी-रोटी कमाने के लिए दर-दर भटकना शायद ऐसी बातें थीं जिन के कारण आपने अपने बारे में *हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता* लिखा है।

लाहौर छोड़ते समय बालक जेठा जी के मन पर जो गुजरी होगी,

उसका अनुमान वही मनुष्य लगा सकता है, जो ऐसी दशा में से गुजरा हो। जिस घर में पालन-पोषण हुआ, जिन गलियों में सात साल खेलते रहे, आज उन्हीं घरों व गलियों को सदा के लिए छोड़ रहे थे। बचपन के साथियों से प्रीति टूट रही थी। किसी शरीक ने शायद खुशी मनाई हो, पर बहुतेरों ने तो आहें ही भरी थीं। ऐसे वातावरण का दृश्य गुरू जी के बालमन पर गहन रूप में अंकित हो गया और उनके अति मृदुल व नम्रता भरे स्वभाव में प्रकट हुआ।

(क) (गुरू) अमरदास जी के संग मिलाप

(गुरू) राम दास जी का ननिहाल गांव बासरके, कोई बहुत बड़ा नगर नहीं है। यह अमृतसर के समीप ही है और छेहरटे से दक्षिण-पश्चिम वाली सड़क पर 8 मील की दूरी पर है। तब यहां पर आधे घर जाटों के थे और आधे क्षत्रियों व अन्य जातियों के। (गुरू) अमरदास जी का गांव भी यही था।

लाहौर से दोहते के ननिहाल-गांव आने की खबर सारे शरीक बिरादरी में तुरंत फैल गई। सारे भाईचारे के लोग नानी तथा बच्चों को धैर्य-व हौसला देने आए। (गुरू) अमरदास जी भी आए। उनके कोमल हृदय में जेठा जी के छोटी आयु में अनाथ हो जाने की घटना के कारण उनको बहुत महसूस हुआ और वे इस अनाथ बच्चे का विशेष ध्यान रखने लग गए।

(ख) बासरके में आजीविका

(गुरू) रामदास जी की नानी की भी आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। इसलिए उन्होंने अल्पायु में ही घुंघणियां (उबले चने व गेहूं) बेचनी शुरू कर दीं ताकि परिवार का गुजारा हो सके। बासरके में आप पांच साल तक रहे और यही काम करते रहे।

सन 1541 में (गुरू) अमरदास जी के जीवन में एक ऐसी घटना घटी जिसके कारण आपने ब्राहमणी प्रभावों वाला कर्मकांडीय जीवन त्याग कर *गुरमत गाडी राह* को अपना लिया। इस साल वे 21वीं बार हरिद्वार गंगा स्नान के लिए गए। वापिसी पर एक ब्रहमचारी साधु के साथ आपका काफी प्रेम हो गया। आप उस को भोजन भी तैयार करके देते थे। ब्रहमचारी साधु बासरके ही आ गया। एक दिन जब उस को पता चला कि उसके भक्त (गुरू)

अमरदास जी ने कोई गुरू ही नहीं धारण किया, तो उसने इस बात का बहुत बुरा मनाया। यह कहते हुए कि *निगुरे के हाथों भोजन सेवन करने से उसके किये सभी धर्म-कर्म व्यर्थ चले गए हैं*, वह वहां से भाग गया। (गुरू) अमरदास जी के मन पर इस बात का गहरा प्रभाव पड़ा और आप बीबी अमरो जी के द्वारा गुरु अंगद देव जी की शरण में खडूर साहिब आ गए।

चाहे (गुरू) अमरदास जी अधिकांश समय खडूर साहिब रहने लग गए थे पर आप 15-20 दिन पश्चात अपने गांव बासरके हो आते और (गुरू) राम दास जी को जरूर मिलते थे। इस तरह दोनों में निकटता बनी रही और (गुरू) रामदास जी के मन में गुरू घर और गुरमत के बारे में प्यार जागृत होना आरंभ हो गया।

***

(3) गोइंदवाल में घाल कमाई

(कर्मठ व्यवहारिक जीवन)

सिख गुरू साहिबान यह बात भली-भांति जानते थे कि सिखी के न्यारेपन को कायम रखने के लिए और इस नवोदित धर्म को पराधर्मियों के प्रभावों व कुचालों से बचाने के लिए, सिख प्रभावी नगर बसाने बहुत जरूरी हैं। वे चाहते थे कि एक ऐसे स्थान पर सिख एकत्र हो कर रहें तो एक दूसरे से प्रोत्साहन ले कर अपने जीवन को सिख मर्यादा के अनुसार ढालकर व सिखी में परिपक्व हों। इसी विचार के अनुसार गुरू नानक देव जी ने करतारपुर (जो अब पाकिस्तान में है) नाम का नगर बसाया। गुरू अंगद देव जी ने खडूर साहिब को सिखी का केंद्र बनाया और उन्होंने गोइंदवाल नगर भी बसाया। इस नगर को बसाने की जिम्मेवारी उन्होंने अपने प्यारे सिख (गुरू) अमरदास जी को सौंपी। (गुरू) अमरदास जी की प्रभावशाली अगवाई और सिख संगत की कार-सेवा द्वारा इस नगर का 1546 में निर्माण हो गया। दूसरी पातशाही के आदेशानुसार (गुरू) अमरदास जी अपने गांव बासरके से अपने सगे संबंधियों और अन्य श्रद्धालु सिखों को गोइंदवाल में ले आए। जेठा जी अपने छोटे बहन-भाई और नानी सहित इस नये नगर में आ गए। उन की आयु उस समय 12 वर्ष की थी।

गोइंदवाल और खडूर में कोई तीन चार मील की दूरी थी। इस प्रकार जेठा जी के लिए गुरू अंगद देव जी के दरबार में पहुंचना बहुत आसान हो गया। गुरू पातशाह जी के दर्शन व पवित्र वचनों, और हजारों सिखों के गुरू की हजूरी में जुड़ बैठने के नज़ारे ने, जेठा जी के मन पर सोने पर सुहागे वाला काम किया। सिखी की लगन तो उन को (गुरू) अमरदास जी से लग गई थी। अब सिखी में विश्वास परिपक्व हो गया और गुरू पातशाह के प्रति श्रद्धा का समुंद्र मन में उमड़ने लग गया। साध संगत की सेवा की लगन भी लग गई। सेवा में से कोई अगम्य आनंद आने लग गया। गुरू अमरदास जी जेठा जी को 7 वर्ष की आयु से ही देख रहे थे। इस बच्चे के अंदर सिखी श्रद्धा, प्रेम और सेवा भाव को देख कर वह बहुत खुश होते थे। यही कारण

था कि वह अपनी बच्ची, बीबी भानी के लिए जेठा जी को योग्य वर समझने लग गए थे।

सिख इतिहास के अनुसार जेठा जी गोइंदवाल में भी घुंघणियां बेचने का कारोबार करते रहे। इस बात की संभावना भी है कि उन्होंने कोई छोटी-मोटी दुकान भी डाल ली हो, क्योंकि नए नगर में दुकानों का बनना एक स्वाभाविक बात थी।

जनवरी 1552 तदनुसार 1 माघ संवत 1609 को गुरू अंगद देव जी ने सारी संगत को एकत्र करके (गुरू) अमरदास जी को गुरू नानक पातशाह की गद्दी सौंप दी। गुरू नानक देव जी की बाणी का संपूर्ण संग्रह, अपने द्वारा रची बाणी सहित, गुरू अमरदास जी को सौंप दिया। 29 मार्च सन 1552 को गुरू अंगद देव जी ज्योति में विलीन हो गए। गुरू अमरदास जी खडूर से गोइंदवाल आ गए। उस समय (गुरू) रामदास जी की आयु 19 वर्ष की थी।

श्री गुरू अमरदास जी ने नए नगर, गोइंदवाल को सिखी के प्रचार का केंद्र बना दिया। जैसा कि पहले संगत खडूर साहिब में आ जुड़ती थीं, अब वे श्री गुरू अमरदास जी के दरबार में हुम-हुमा कर आने लग गईं। जेठा जी अपना अधिकांश समय संगत की सेवा में ही लगे रहते। शारीरिक आवश्यकताएं तो उन्होंने बहुत कम कर ली थीं इसलिए थोड़ी बहुत रोजी कमाकर ही गुजारा कर लेते थे। चाहे लंगर तो खुला बंटता ही था, पर आप अपनी मेहनत करके ही आहार किया करते थे। आप एक सच्चे सिख के रूप में *घालि खाइ किछु हथहु* देइ के महान गुर-उपदेश के अनुसार जीवन व्यतीत कर रहे थे।

(क) विवाह

जेठा जी की जीवन-शैली ने गुरू अमरदास जी का मन तो पहले ही मोह लिया था। पिछले बारह-तेरह वर्षो की निकटता ने यह सिद्ध कर दिया था कि जेठा जी गुरसिखी के मार्ग की सीढ़ियों पर सहज-सहज चढ़ते जा रहे थे। उन के ऐसे जीवन को देखकर गुरू अमदास जी ने अपनी सपुत्री बीबी भानी जी का विवाह उन के साथ सन 1553 में कर दिया। यह जोड़ी है भी बहुत आदर्श थी। जहां जेठा जी गुरमति-गुणों से परिपूर्ण थे, वहीं बीबी भानी

जी भी गुरू उपदेशों पर चलने वाले थे। उन्होंने सेवा करके गुरू पिता के दिल में विशेष स्थान बनाया हुआ था। बीबी जी स्वभाव के अति सुशील, संयमी, नम्रता वाले व श्रेष्ठ बुद्धि के मालिक थे। उनके द्वारा गुरू पिता द्वारा की गई सेवा का वर्णन महिमा प्रकाश में इस प्रकार किया गया है :

जब पहर रात रहै अंमृत वेला।।
गुर करै इश्नान भगत सुख केला।।
तिस समै बीबी जी दरसन करै।।
गुर की भगत सद हिरदै धरै।। (साखी २९ पातशाही तीजी)

यह सेवा, बीबी जी बेटी होने के कारण ही नहीं करते थे, बल्कि एक सिख के रूप में करते थे। सिखी मार्ग पर चलने का चाव जो था। उन की इस भावना को सूरज प्रकाश के कर्ता ने इस प्रकार वर्णित किया है :

रहै निंम बहु सेव कमावहि।
अनुसारी हुइ सदा चिंतावहि।

मन को दृढ़ करके, सुरति को टिकाते थे। पर इस को प्रकट व प्रदर्शित बिल्कुल नहीं करते थे। वे कहते थे कि दिखलावे से शुभ गुणों का लाभ नहीं होता है।

आछे काम दिखाइ न चाहै।।
लाभ घटै पाखंड इस माहै।।

ऐसे ऊंचे व निर्मल गुणों के मालिक थे, बीबी भानी जी। उनके लिए उचित वर, जेठा जी ही हो सकते थे। तो ही तो गुरू अमरदास जी ने उन की पारिवारिक पृष्ठभूमि और अति गरीबी की दशा को नज़रअंदाज करके, उन के उत्तम विचारों, धार्मिक लगन, सेवाभाव को ध्यान में रख कर, बीबी भानी के लिए उन्होंने (जेठा जी) को चुना था।

(ख) गुरू अमरदास जी के संग प्रचारक दौरे

सन 1553 के आरंभ में गुरू अमरदास जी कुरुक्षेत्र तथा हरिद्वार आदि हिंदू तीर्थों पर गुरमत-प्रचार करने के लिए और हिंदू जनता को जीवन का सही रास्ता बताने के लिए गए। सिख संगत के अतिरिक्त (गुरू) रामदास जी

भी उनके साथ गए।

आप 14 जनवरी, 1553 को कुरूक्षेत्र पहुंचे। उस दिन सूर्य ग्रहण लगा हुआ था और *अभीच पर्व* का समय था। अभीच पर्व के बारे में **प्रोफैसर साहिब सिंघ** जी लिखते हैं :

''ज्योतिष के अनुसार उत्तरखाड़ा नक्षत्र के पिछले हिस्से और श्रवण नक्षत्र की पहली चार कलां के मेल में एक ऐसा समय आता है, एक लगन आता है, जिस को अभीच कहते हैं। सूर्य ग्रहण के मौके पर इसका अवसर बनता है।''

प्रोफेसर सतिबीर सिंघ जी के अनुसार, *''28 नक्षत्रों में से एक नक्षत्र अभिजित है। अभिजित 22वां नक्षत्र है। महाभारत वन-पर्व में वर्णन आता है कि सूर्य ग्रहण के समय सेनहत (जो कुरुक्षेत्र में है) तीर्थ में स्नान करने पर एक हजार अश्वमेघ यज्ञों का फल प्राप्त होता है सारे पाप भी समाप्त हो जाते हैं।*

गुरू जी ने लोगों को समझाया कि पाप नहाने से समाप्त नहीं होते बल्कि सर्व व्यापक प्रभु का सुमिरन करने, विकारों का त्याग करने और शुभ कर्म करने से ही समाप्त हो सकते हैं।

आर्य कुरुक्षेत्र से पिपली, करनाल, पानीपत गए और शामली के रास्ते जमना पार की। गुरू जी का इतना प्रताप था कि नदी पार करने पर जो मसूल यानी टैक्स एकत्र करने वाले कर्मचारी, लोगों से मसूल एकत्र करते थे, वे स्वयं उल्टे भेंट ले कर आपके सम्मुख हाजिर हुए। सिख संगत के साथ अन्य तीर्थ यात्री भी बिना मसूल दिए नदी पार कर गए। इसी तरह की घटना हरिद्वार के पास (गंगा नदी के किनारे) जमालपुर में हुई। हिंदू जनता पर गुरू जी की, और सिख संगत की, निर्भयता का बहुत प्रभाव पड़ा।

इस प्रचारक दौरे के समय आम लोगों के अतिरिक्त योगियों, दिगंबरों, सन्यासियों, साधु-संतों, विद्वानों के संग गुरू जी की गोष्टियां (धर्म चर्चाएं) हुईं। आप ने हर स्थान पर गुरमत विचारधारा के डंके बजाए। गुरू अमरदास जी की जै जै कार होती देख कर (गुरू) रामदास जी का हृदय अनंत प्रसन्नता और गुरू श्रद्धा से भर गया। तो ही तो आपने इस दौरे का वर्णन तुखारी राग के एक शबद **नावणु पुरबु अभीचु, गुर सतिगुर दरसु भइआ।।** (पृ १११६) में किया है। आपने यह बात स्पष्ट कर दी कि गुरू रामदास जी तीर्थों पर किसी

श्रद्धा-भावना से नहीं थे गए, बल्कि लोगों को सही जीवन मार्ग बतला कर, उनके कल्याण के लिए गए थे। आप जी का फुर्मान है :

तीरथ उदमु सतिगुरू कीआ, सभ लोक उधरण अरथा।।

(ग) अकबर के दरबार में

सिख सतगुरू साहिबान की धर्म प्रचार लहर ने ब्राहमणी मत के विश्वास के खोखलेपन को लोगों के सामने अच्छी तरह उभार कर पेश कर दिया था और ब्राहमणों की कपटी चालों का पर्दा फाश कर दिया था। हजारों की संख्या में लोग ब्राहमणों के प्रभाव से निकल कर गुरमत के धारणकर्ता बन रहे थे। स्वयं निखट्टू बन कर दूसरों के दान पर मौजें करने वाले ब्राहमणों के लिए यह बहुत बड़ी नमोशी वाली बात थी। गुरमति के अकाट्य तर्कों के सामने इन की सभी चतुराइयां हथियार गिरा चुकी थीं। अब यह लोग ऐसे अवसरों की ताक में रहते थे जब गलत प्रचार करके जनता को सिखी के विरुद्ध भड़काया जा सके। गुरू अमरदास जी के समय में इन को ऐसा अवसर मिल भी गया। इन्होंने गोइंदे मरवाहे के पुत्रों को उकसाया कि गुरू अमरदास ने तुम्हारे पिता की जमीन पर नगर बसा कर तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय किया है, तुम सरकार-दरबार में फरियाद करो और अपना अधिकार प्राप्त करो। गोइंदवाल का हरी राम तपा, जिस की लालची वृत्ति की पोल गुरू पातशाह ने खोल दी थी, वह भी इस चांडाल चौकड़ी में शामिल हो गया। सब ने मिल कर गुरू अमरदास जी के विरूद्ध लाहौर दरबार में जा कर शिकायत की। लाहौर का गवर्नर खिज़र ख्वाजा खान, जांच करने के लिए गोइंदवाल आया। वास्तविकता का पता लग जाने पर उसने मरवाहे चौधरी का मुकद्दमा खारिज कर दिया।

जात अभिमानियों ने फिर भी दिल नहीं छोड़ा ओर गोइंदे के पुत्र को अकबर के दरबार में भेज दिया। उसने अपने आप को सच्चा सिद्ध करने के लिए रो-रो कर फरियाद की। अकबर ने पूरी जांच पड़ताल करने के पश्चात और लाहौर के गवर्नर द्वारा की गई जांच का विवरण लेने के बाद मामले को खारिज कर दिया। झूठा साबित होने के कारण मरवाहे चौधरी का बहुत

अपमान हुआ। घर आया तो रिश्तेदारों और इलाके के लोगों ने भी लाहनतें डालीं कि गुरू साहिब के विरूद्ध दूशनबाजी का यही परिणाम निकलना था। नमोशी का मारा चौधरी बीमार हो गया।

ब्राहमणों ने फिर भी षड्यंत्र जारी रखे और एक अंतिम वार करने की सोची। उन्होंने गुरू साहिब के विरूद्ध एक लंबा चौड़ा शिकायतनामा तैयार किया। उस में विस्तार सहित लिखा कि *''गुरू साहिब सदियों पुराने धर्म पर वार कर रहे हैं। देवी देवताओं की पूजा, तीर्थ स्थानों की यात्रा, मूर्ति पूजा, पवित्र नदियों की पूजा, पुन्य दान, धार्मिक पाखंड आदि का विरोध करके हमारे धर्म में सीधा दखल कर रहे हैं। देव बाणी संस्कृत के स्थान पर पंजाबी बोली का प्रचार कर रहे थे। हमारी धार्मिक पुस्तकों, वेदों, स्मृतियों के स्थान पर पंजाबी बोली का प्रचार कर रहे हैं। हमारी धार्मिक पुस्तकों, वेदों स्मृतियों, शास्त्रों के अनेकों सिद्धांतों को गलत बता रहे हैं। धर्म-पुस्तकों ने हमें (ब्राहमणों को) विशेष पद प्रदान किया है। गुरू साहिब व उनके सिख हमारा कोई ध्यान नहीं रखते, बल्कि लोगों में हमारा अपमान कर रहे हैं।...आप हम पर कृपा करें और इनके मत प्रचार पर पाबंदी लगाएं। आप हमारे बादशाह हो और हम आपकी प्रजा हैं। इसीलिए हम आपके दर के फरियादी हुए हैं।''*

अकबर इन्हीं दिनों (सन 1566 में) लाहौर आया हुआ था। उसका भाई मिर्जा मुहम्मद हकीम काबुल का शाह था और पंजाब को अपने कब्जे में करने की योजनाएं बना रहा था। उस की बगावत को दबाने के लिए अकबर लाहौर आया था। जाति अभिमानियों ने उपरौकत शिकायतनामा अकबर के दरबार में पेश किया। चाहे अकबर अब तक गुरू साहिब की सरगर्मियों से पूरी तरह वाकिफ हो चुका था पर वह ऐसा प्रभाव नहीं देना चाहता था कि उसने बिना जांच पड़ताल के एक पक्षीय फैसला कर दिया है। अतः उसने गुरू अमरदास जी को संदेश भिजवाया कि शिकायतों का निर्णय करने के लिए गुरू जी या तो स्वयं दर्शन दें या किसी प्रतिनिधि को भेजें।

गुरू अमरदास जी को गुरमत का पक्ष पेश करने के लिए सब से योग्य व्यक्ति (गुरू) रामदास जी ही प्रतीत हुए। अतः उनको लाहौर भेजा गया। साथ में बाबा बुढा जी व कुछ और सिखों को भी भेजा गया। (गुरू) रामदास जी ने एक-एक शिकायत का तर्क पूर्ण उत्तर दिया और गुरमत सिद्धांतों की ऐसी व्याख्या की कि दरबारी-विद्वानों की पूरी संतुष्टि हो गई। ब्राहमण पूरी तरह

निरुत्तर हो गए। आपने बादशाह को बल्कि यह भी कहा कि धर्म स्थानों अथवा तीर्थों पर जाने वाले हिंदुओं से जो जज़िया यानी विशेष टैक्स लिया जाता है, वह न लिया जाए। हिंदू समाज में प्रचलित सती की घृणित प्रथा को रोके जाने की सिफारिश भी की क्योंकि यह स्त्री जाति वर बड़ा अत्याचार है। इस विचार चर्चा के समय अकबर गुरमत सिद्धांतों से बहुत प्रभावित हुआ और उसने गोइंदवाल जा कर गुरू अमरदास जी के दर्शन करने का मन बना लिया। दिल्ली को वापिस जाते हुए वे गुरू दरबार में हाजिर हुए। आम लोगों के साथ पंगत में बैठकर उसने लंगर में भोजन किया। वह लंगर के लिए जागीर देना चाहता था पर गुरू जी ने यह कह कर उसे अस्वीकार कर दिया कि लंगर गुरसिखों के दसवंध यानी आय के दशांश हिस्से से ही चलता है।

(घ) बाउली (जलकुंड) की सेवा

प्राचीन धर्म पुस्तकों और ब्राहमणी प्रचार के प्रभाव के कारण भारतीय समाज जाति पात के बंधनों में पूरी तरह जकड़ा हुआ था। निर्गुण भक्तिधारा के भक्तों और सिख गुरू साहिबान ने इस जाति पात के खिलाफ जेहाद छेड़ा। जहां गुरबाणी में जात पात के विचार का भरसक खंडन किया गया वहीं इस को समाप्त करने के लिए व्यवहारिक कदम भी उठाए गए। गुरद्वारों में सभी वर्णों के लोगों, अमीरों व गरीबों के लिए साझी संगत और सामूहिक लंगर जारी किए गए। एक ही पंक्ति में ब्राहमण को शूद्र के साथ और सरधन को निर्धन के साथ बिठाकर लंगर में भोजन करना पड़ता था। इसी भावना के अधीन ही गुरू अमरदास जी ने गोइंदवाल में बाउली की रचना सन 1559 में करवाई।

बाउली को बनाने का एक कारण जाति अभिमानी ब्राहमणों, गोइंदवाल के तपीशर गोइंदे के लड़कों की गुरू घर व गुरमत से विरोध भी था। इन्होंने *खोजे* लड़कों को उकसा कर सार्वजनिक कूएं से पानी भरने गए सिखों के घड़े तोड़ने की छेड़खानी शुरू करा दी। इस सें कलह क्लेश और झगड़े बढ़ने का खतरा पैदा हो गया। अत: सिख संगत के लिए अलग से बाउली बनवाई गई।

बाउली का निर्माण (गुरू) रामदास जी की निगरानी में हुआ। (गुरू) रामदास जी केवल निगरानी ही नहीं करते थे, बल्कि अपने हाथों श्रमदान भी करते थे। खुदाई का काम और टोकरियों से मिट्टी बाहर निकलने का काम आपने बहुत चाव से किया। आप चाहे गुरू अमरदास जी के जमाई थे, पर सेवा करते हुए आपने इस रिश्ते का कोई ख्याल नहीं किया। उन्हीं दिनों में आप की जात बिरादरी के कुछ लोग लाहौर से हरिद्वार जाते हुए गोइंदवाल में आए। वे आपको टोकरी ढोता देख कर बहुत हैरान हुए। कहने लगे, यदि सुसराल में आ कर टोकरी ढोनी थी तो यह काम लाहौर में कर लेना था। यहां आ कर हमारा नाक क्यों कटवा रहे हो? फिर गुरू अमरदास जी को कहने लगे, ''आपने हमारे शरीक भाई से इतने नीच काम करवा कर हमारा अपमान किया है।'' गुस्से में ये लोग गुरू जी का आदर सम्मान करना भी भूल गए। शरीकों के ऐसे बोल सुनकर (गुरू) रामदास जी के मन को बहुत ठेस पहुंची। आप सतगुरू जी के चरणों पर गिर पड़े और कहने लगे - ''पातशाह इन की बातों का बुरा न मनाना। ये तो अनजान हैं। यह क्या जाने, सेवा की निधि तो बड़े भाग्य होने पर ही मिलती है। सतगुरू जी ! जैसे दूसरों के दोशों को क्षमा कर देते हो, इन को भी क्षमा कर दो।''

इस प्रकार (गुरू) रामदास जी निष्काम हो कर, नम्रता, श्रद्धा और गुरू की पवित्र भय भावना में रह कर सेवा कर रहे थे। सेवा की लगन दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही जा रही थी। सेवा में इतने तल्लीन हो जाते थे कि कई कई दिन गुरू दरबार की हाजरी भरने का समय भी न मिलता। एक दिन गुरू अमरदास जी ने, भाई बलू जी को पूछ ही लिया कि क्या बात है, जेठा जी नज़र नहीं आते? क्या वे कहीं बाहर गए हुए हैं? तो भाई जी ने उत्तर दिया, नहीं पातशाह जी, जेठा जी यहां पर ही हैं, पर सेवा कर रहे हैं। वे सुबह से शाम तक सेवा में जुटे रहते हैं और गुरू दरबार में हाजरी भरने का समय नहीं नहीं मिलता। आप पहले लंगर तैयार करते हैं फिर संगत को पंक्ति में बिठा कर आदर से लंगर छकाते हैं। ठंडा जल स्वयं भर कर लाते हैं। हरेक की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। शबद सुनाते हैं। हर आए यात्री के लिए बिछौने का प्रबंध करते हैं और जब संगत आराम कर रही होती है तो पंखे से हवा करते हैं और यहां तक कि थके-मांदों की मुट्ठी चापी भी करते हैं। यदि

रात को भी कोई पानी मांगे या कोई और इच्छा व्यक्त करे, तो उसकी आवश्यकता या इच्छा की पूर्ति करते हैं। यथा :

"देग तयार कर देहि अहारा,
पंकति के बिठाइ इक सारा।
सीतल जल को भरि भरि लिआवै,
बूझ बूझ संगत को पयावै।।१७।।
छुधा पिआसा सभी की हरै,
बांछत सिखयोनि दैबो करै।
कर महि गहै बीजना फेर,
बायू करति उसुनु बहु हेरि।।

यह सुनकर गुरू अमरदास जी बहुत प्रसन्न हुए और शाबाश दी। आपने कहा कि जिस ने संगत को, गुरू-रूप जान कर सेवा की है, नौ निधियां और अठारह सिद्धियां उसी को ही प्राप्त होती हैं। इससे बड़ी भाग्यशाली और कोई बात नहीं।

जिन संगत की सेवा करी,
हमरे हित इमि प्रीती धरी।।
दुलभ पदारथ होइ न कोइ,
नौ निधि सिधि पाए है सोइ।।
सिख मेरे सेवे अनुराग,
अमर न इस ते को बडिभाग।।

(सिरी गुर प्रताप सूरज, रास पहिली, अंस ४३)

(ड.) संतान

(गुरु) रामदास जी के घर में तीन पुत्र पैदा हुए - बाबा पृथी चंद सन 1558 में, बाबा महादेव, सन 1560 में और (गुरू) अरजन देव जी 15 अप्रैल सन 1563 को। पृथी चंद अति दर्जे का चालाक था और चालें चलने में माहिर था। बाबा महादेव उदासी स्वभाव के थे, संसार से उपराम रहने वाले थे। (गुरू अर्जुन देव जी गुरू-पिता के आज्ञाकारी और गुरमत के अनुसार जीवन व्यतीत

करते थे।

(च) सिखी के केंद्र श्री अमृतसर की नींव

सिखी के प्रचार और सिख भाईचारे की मजबूती के लिए गुरू नानक देव जी ने करतारपुर, गुरू अंगद देव जी ने खडूर साहिब और गुरू अमरदास ज़ी ने गोइंदवाल साहिब में नगर बसाए थे। गुरू अमरदास जी ने माझा में नया नगर बसाने की इच्छा व्यक्त की और (गुरू) रामदास जी को यह काम सौंपा। सूरज प्रकाश में इस बात का उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

ग्राम तुंग के अहै उचेरे।
गिलवाली भे लखहु परेरे।
है सुलतान पिंड जिस नामू।
तिस ते पश्चम दिस अभिरामू।
ताहि जाइ करि ग्राम बणावहु।
सुंदर आपणे सदन बणावहु।

अत: (गुरू) रामदास जी ने गुमटाला, तुंग, सुलतानविंड, गिलवाली आदि गांवों के बीच जमीन खरीद कर सन 1570 के अर्द्धकाल में नया नगर बसाना आरंभ कर दिया। स्वयं ही परियोजना बनाई और अपनी निगरानी में शहर का निर्माण करवाया।

पानी की जरूरत को पूरा करने के लिए सब से पहले ताल खुदवाने आरंभ किए जिसका नाम संतोख सर रखा। इसके बाद सन 1573 में उस सरोवर का टक लगाया जो अमृतसर के नाम से प्रसिद्ध है। यह टक दुख भंजनी बेरी के पास लगाया। इस ताल की खुदाई सिख संगत ने तन मन से की। पर सन 1574 में गुरू अमरदास जी के ज्योति में विलीन होने के पश्चात खुदाई का काम बंद हो गया, जो दुबारा सन 1577 में आरंभ किया गया और सन 1581 में संपूर्ण हुआ।

सरोवरों की खुदाई के साथ-साथ नये नगर का निर्माण जारी रहा। पहले रहने के लिए घर बनाए गए, जो *गुरू के महल* कहलाए। उन के साथ लगते व्यापारिक केंद्र का निर्माण किया और उस का नाम गुरू का बाजार रखा गया। नगर का नाम गुरू का चक रखा गया जो बाद में जा कर *चक रामदास,*

रामदास पुर और अंत में *अमृतसर* कहलाया। शहर का आखिरी नाम अमृतसर सरोवर के नाम पर अमृतसर ही प्रसिद्ध हो गया।

सन 1574 में गुरू रामदास जी गुरू बने तो यहां पर आ टिके। सिख संगत का आवागमन और बढ़ गया। चहल-पहल और बढ़ गई और शहर की आबादी में काफी बढ़ोत्तरी हुई।

सन 1577 में गुरू रामदास जी ने गांव तुंग वालों तथा 700 अकबरी रूपए में 500 बीघे जमीन और खरीदी क्योंकि शहर की आबादी दिनो-दिन बढ़ रही थी। जब यह बात फैल गई कि नया बस रहा नगर ही सिखी का केंद्र बनना है तो कई व्यवसायों के लोग भी यहां पर आ बसे। भाई सालो व कुछ और गुरू घर के अनन्य सेवकों ने अपने रिश्तेदारों और सज्जनों मित्रों की सहायता से आस-पास के गांवों में से कईयों को प्रेरित करके यहां लाकर बसाया।

बाद में श्री गुरू अर्जुन देव जी ने अमृतसर सरोवर के बीच श्री दरबार साहिब की स्थापना करवाई और उसके बाद गुरू हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण करवाया। इस प्रकार श्री अमृतसर सिखी के केंद्रीय स्थान के तौर पर विकसित हो गया और इस शहर ने अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त की।

***

(4) सेवक से सतगुरू

अपने आध्यात्मिक, सामाजिक और राजनीतिक विचारों के प्रचार और प्रसार के लिए और इन विचारों को मानने वाले लोगों के आदर्श समाज के निर्माण के लिए, गुरू नानक देव जी ने गुरमत के गुणों से परिपूर्ण अपने अनन्य सेवक भाई लहणा जी को गुरू अंगद का नाम दे कर गुरू नियुक्त किया। इस महान जिम्मेवारी को निभाना कोई आसान बात नहीं थी। इसलिए गुरू नानक पातशाह जैसे सर्वगुण संपन्न व्यक्तित्व की आवश्यकता थी। इसीलिए गुरू नानक पातशाह ने अकाल पुरख से प्राप्त रूहानी ज्ञान अथवा ईश्वरीय प्रकाश का निवास, गुरू अंगर देव जी के हृदय में कर दिया। इस परस कला के पासार से गुरू नानक वाली ज्ञान ज्योति गुरू अंगद में आ गई। अपनी सांसारिक यात्रा की समाप्ति पर उत्तरोतर भविष्य में एक गुरू, दूसरे गुरू के अंदर इस नानक-ज्योति का प्रकाश कर देता था। जब दशम पिता गुरू गोबिंद सिंघ जी के समय गुरू नानक पातशाह के विचारों वाला आदर्श समाज, सिख पंथ, संपूर्ण रूप में सृजित किया गया तो दशम पिता ने ऐलान कर दिया कि अब एक शारीरिक गुरू की आवश्यकता नहीं रही और आगे के लिए गुरबाणी ही विचारधारा की अगवाई प्रदान करेगी क्योंकि असल में, यही नानक ज्योति है।

नानक ज्योति का एक गुरू से दूसरे गुरू में प्रवेश करना बिल्कुल वैसे ही था जैसे एक दीपक की ज्योति से दूसरा दीपक जगता है। भाई गुरदास जी ने इस विचार की पुष्टि इस प्रकार की है :

गुरु अंगद गुरु अंगु ते, अंमृत बिरखु अंमृत फल फलिआ।
जोती जोति जराईअनु, दीवे ते जिउं दीवा बलिआ।

(वार २४, पउड़ी ९)

रबाबी सत्ता व बलवंड द्वारा उचारी गई *रामकली की वार* में उपरोक्त विचार को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि सतगुरू जी के शरीर तो चाहे बदलते रहे हैं, पर ज्योति वही (गुरू नानक जी वाली) ही रही है :

जोति ओहा जुगति साइ,
सहि काइआ फेरि पलटीऐ।। (पृ ९६६)

भाई नंद लाल जी ने भी अपनी फ़ारसी की पुस्तक *जोति बिगास* में *इको गुरू-जोति दे* ख्याल का वर्णन इस प्रकार किया है :

हमू नानक अस्तो, हमू अंगद अस्त।
हमू अमरदास अफ़ज़ुलो अमज़द अस्त।२।
हमू रामदासो हमो अरजुन अस्त।
हमू हरगोबिंद अकरमो अहिसन अस्त।२४।
हमू अस्त हरि राइ करता गुरू।
बदु आशकारा हमा पुस्तो रू।२५।
हमू हरिकृष्न आमदा सर बुलंद।
अज़ो हासिल उमीद हर मुहतमंद।२६।
हमू अस्त तेगि बहादर गुरू।
कि गोबिंद सिंघ आमद अज़ नूरि ऊ।२७।
हमू गुरू गोबिंद सिंघ, हमू नानक अस्त।
हमा शबदि ऊ जौहरे मानक अस्त।२८।

अर्थ : नानक भी वही है और अंगद भी वही। बख्शिश और महानता का मालिक अमरदास भी वही है। वही रामदास है और वही अर्जुन है। सब से बड़ा और अच्छा हरिगोबिंद भी वही है। वही हरि राय कर्ता गुरू है, जिस को हर चीज़ की सही गलत होने का साफ पता चल जाता है। वही अग्रणी हरिकृष्न है जिस से हर हाजतमंद की मुराद पूरी होती है। वही गुरू तेग बहादुर है जिस के नूर से गोबिंद सिंघ प्रकट हुआ है। वही गुरू गोबिंद सिंघ है और वही नानक गुरु है, उसके शब्द जवाहरात और माणिक मोती हैं।

नानक ज्योति के अधिकारी वही पावन गुरसिख बनते रहे हैं जिन्होंने गुरू के सम्मुख अपने आपको पूर्णतः समर्पित कर दिया होता है। गुरू सेवा इन का जीवन मनोरथ होता था और गुरू आदेशों पर चलना जिनका नित्यक्रम होता था। गुरू नानक साहिब के अपने पुत्र इस कसौटी पर खरे न उतर सके और नानक ज्योति के अधिकारी बाबा लहणा जी बने। आगे से उन्होंने भी इस ज्योति का प्रकाश अपने से बड़ी आयु के बाबा अमरदास जी में किया क्योंकि वह सारा समय गुरू सेवा, संगत की सेवा और प्रभु सुमिरन में ही व्यतीत करते थे। गुरू अंगद साहिब के अपने पुत्र दातू जी व दासू जी तो गुरू संतान होने

के गर्व में ही रहे।

गुरू अमरदास पातशाह के अपने पुत्र बाबा मोहन जी व मोहरी जी काफी बड़ी आयु के हो गए थे पर वे सेवा सुमिरन की राह को छोड़कर अपनी बनाई राहों पर ही चलते रहे। बाबा मोहन जी, जहां झमेलों से दूर उपरामता वाला जीवन व्यतीत करते थे, मस्ताने बने रहते थे, वहीं बाबा मोहरी जी मायावादी रुचियों के शिकार थे। धन जायदाद से उनका अधिक ही प्यार था। गुरू अमरदास जी के दोनों जमाई, जेठा जी व भाई रामा जी (बीबी दानी जी का पति) सेवा वाला जीवन व्यतीत कर रहे थे। जेठा जी (भाई रामदास जी) जहां बिल्कुल निष्काम हो कर और अपना कर्तव्य जानकर सेवा करते थे। वहीं भाई रामा जी किसी प्राप्ति की खातिर सेवा करते थे। अपनी अक्ल का उन को बहुत गर्व था और अहं की भावना का त्याग नहीं थे कर सके।

जेठा जी के स्वत्याग, नम्रता, हलीमी, मृदुल स्वभाव, संगत की निष्काम सेवा, प्रभु प्रीति और गुरू आदेशों को बिना किसी हील हुज्जत के मानने के गुणों ने, गुरू अमरदास जी के मन को तो पहले ही जीत लिया था। वह तो गुरू जी के इन वचनों पर बहुत दृढ़ता से चल रहे थे कि :

भगता की चाल निराली ।।
चाला निराली भगताह केरी, बिखम मारगि चलणा ।।
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना, बहुतु नाही बोलणा ।।
खंनिअहु तिखी, वालहु निकी, एतु मारगि जाणा ।।
गुर परसादी, जिनी आपु तजिआ, हरि वासना समाणी ।।
कहै नानकु चाल भगता, जुगहु जुगु निराली ।।१४।।

और

जे को सिखु गुरू सेती सनमुख होवै ।।
होवै त सनमुखु सिखु कोई, जीअहु रहै गुर नाले ।।
गुर के चरन हिरदै धिआए, अंतर आतमै समाले ।।
आपु छडि सदा रहै परणै, गुर बिनु अवरु न जाणै कोए ।।
कहै नानकु सुणहु संतहु, सो सिखु सनमुखु होए ।।२१।।

(रामकली, महला ३, अनंदु, पृ ९१९)

अपने ऐसे उच्च व निर्मल जीवन के कारण जेठा जी गुरू अमरदास

जी की कृपा के पात्र बन गए और उन्होंने जेठा जी को गुरगद्दी देने का मन बना लिया। पर संगत को यह बताना बहुत जरूरी था कि गुरू की कृपा निर्मल जीवन वाले, गुरू सेवा व साध संगत की सेवा निष्काम भावना से करने वाले, और गुरू आदेशों को सत्य-सत्य करके मानने वाले सिख पर ही होती है। अहं भावना वाले चतुर व चालाक, गुरू कृपा से विरक्त रह जाते हैं। इसलिए परीक्षा का कौतुक रचा गया।

अत: एक दिन गुरू अमरदास जी ने भाई जेठा जी व भाई रामा जी को आदेश दिया कि उन के बैठने के लिए अलग-अलग थढ़े यानी छोटे मंच बनाए जायं। दोनों ही गुरू आज्ञा में जुट गए। पहली बार जो थढ़े बने, वे गुरू जी ने पसंद न किये और गिरा कर और बनाने का आदेश कर दिया। गुरू पातशाह का यह आदेश सुनकर भाई रामा जी का तो दिल ही टूट गया। कहने लगे- ''जैसे आपने समझाया था, मैंने तो वैसे ही थढ़ा बनाया है। इसमें कोई कमी नहीं है।'' पर सतगुरू ने उसे गिरवा दिया।

उधर भाई जेठा जी ने गुरू-आदेश को सुनते ही थढ़ा गिराना शुरू कर दिया। थढ़ा ठीक न बनने पर उसने सतगुरू जी के क्षमा याचना भी की।

दूसरे दिन फिर थढ़े बनाए गए। सतगुरू जी ने फिर कहा - ''ठीक नहीं बने। गिरा कर फिर बनाओ।'' यह सुनते ही भाई रामा जी तिलमिला उठे। कहने लगे, ''जैसे आपने कहा था, वैसे ही बनवाया है। बहुत शानदार व बैठने योग्य है। लोग तो खूब तारीफ कर रहे हैं। इस से अच्छा और भला क्या बन सकता है।''

जब गुरू जी भाई जेठा जी के पास आए, वे कहने लगे ''सतगुरू जी, मेरी तो मति ही थोड़ी है। आपकी बात को पूरी तरह समझ नहीं सका। पिछली गलती क्षमा कर दो और फिर कृपा करके समझाओ। अब पूरी कोशिश करूंगा।

तुमरी मती अगाधि बडेर।
हमँ मतिमंद सकहि नाह जानि।
तउ कृपा तुम करहु महान।।३३।।
बिसरि जाति हमरी मति थोरी।।
बखशहु खता आप अबि मोरी।।

तीसरे दिन फिर थढ़े बनाए गए। सतगुरू जी ने देख कर फिर कहा, "जिस तरह के मैंने कहे थे, उसी तरह नहीं बने। ये मुझे पसंद नहीं हैं। कई बार समझाया है, पर थढ़े ठीक नहीं बन रहे।"

इतना सुनना ही था कि भाई रामा जी गुस्से में आ गए। उस समय ऊंची आवाज में कहने लगे - "जैसे निर्देश देते हैं, वैसे ही बनाता हूं। इस से अच्छा और कौन बना सकता है ? आप जैसे कह जाते हो, आपको स्वयं ही भूल जाता है। इस में मेरा क्या कसूर है। अब न इस को गिरवाना।"

जब सतगुरू जी भाई जेठा जी के पास पहुंचे, तो उन्होंने तो सतगुरू के चरण ही पकड़े और कहा कि मैं तो अनजान हूं, भुलक्कड़ हूं। आप कृपालू हो। बार-बार भूल क्षमा कर देते हो। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे आप की बात समझ नहीं आई। फिर समझा दें। और थढ़ा बना दूंगा।

यह सुनकर गुरू अमरदास पातशाह बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे कि इस की सेवा मुझे पसंद आई है। यह निर्माण सेवक हैं, अपना किया हुआ जताते नहीं हैं। आपने दीवान सजाया। सारी संगत और अपने सारे परिवार के सामने जेठा जी (गुरू रामदास जी) को गुरू स्थापित कर दिया। तब गुरू रामदास जी की आयु 40 वर्ष की थी और सन् 1574 के सितंबर महीने की पहली तारीख थी।

यह एक महान घटना थी। गुरू रामदास जी आज उस दैवी-सिंहासन पर सुशोभित हो रहे थे जिस सिंहासन के सम्मुख दुनियां के बड़े-बड़े राजाओं, महाराजाओं ने भूतकाल में शीश निवाया था और आगे भी शीश झुकाना था। आपको बचपन की याद आ गई जब अनाथ-बाल के रूप में वे नानी के साथ बासरके आए थे। **प्रोफैसर साहिब सिंघ** जी ने बहुत ही भावपूर्ण शब्दों में इस घटना का वर्णन किया है, जो वैसे-का-वैसा नीचे अंकित किया जाता है :

"जिस समय गुरू अमरदास जी ने (गुरू) रामदास जी को चौकी पर बिठा कर भरे दीवान में स्वयं इनके सम्मुख माथा टेका तो ये वैराग्य में आ कर बोल उठे, "पातशाह ! तूं स्वयं जानता है, जब मैं यतीम, लाहौर की गलियों में से निराश्रित हो कर निकला था, तब मेरी क्या दशा थी। मैं गलियों में माटी में धूल फांकता था। लाहौर निवासी मेरे रिश्तेदारों में से कोई मेरी बांह पकड़ने को तैयार नहीं था। नानी ने मुझे गले लगाया, पर नानी भी बेचारी गरीबनी ही

थी। पातशाह ! छोटे से कीड़े की क्या मजाल है? बस ! मैंने यही किया था। मेरे सतगुरू जी ! यह तेरी कृपा ही थी : तूने मुझे प्यार की निगाह से देखा, तूने मुझ यतीम की बांह पकड़ी, मुझे धूल चाटते को, आज आसमान पर चढ़ा दिया।''

अपनी इस मनोभावना का वर्णन श्री गुरू रामदास जी ने अपनी बाणी में इस प्रकार किया है :

जो हमरी बिधि होती, मेरे सतिगुरा,
सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ।।
हम रुलते फिरते, कोई बात न पूछता,
गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ।।

(गउड़ी बैरागणि, महला ४, पृ १६७)

(क) एक भुलेखा

'त्वारीख गुरू खालसा' और *सूरज प्रकाश* में अंकित एक साखी से यह भुलेखा पैदा होता है कि गुरू रामदास जी को गुरगद्दी की प्राप्ति उन की पत्नी, बीबी भानी जी की सेवा और हठ के कारण हुई थी। साखी संक्षेप में इस प्रकार है :

''गुरू रामदास जी तथा बीबी भानी जी ने गुरू अमरदास जी की इतनी सेवा की कि और कोई कर ही न सके। बीबी जी डेढ पहर रात रहते, उठते और गुरू पिता गुरू अमरास जी को स्नान करवाते। एक दिन स्नान कराते समय चौकी का पाया टूट गया। बीबी जी ने अपना पैर पाए की जगह पर रख दिया। पैर में कील चुभ गई। खून बहने लगा। स्नान करने के पश्चात गुरू जी को पता लगा, पैर में से कील निकाला और वचन किया :

''बीबी ! तेरी सेवा को फल लगे हैं। कुछ मांग। तो बीबी जी ने हाथ जोड़ कर कहा, ''यदि कृपालू हो तो मेरे पति को ऐसी गुरुता प्रदान करो जो फिर मेरी कुल में ही रहे।''

साखीकार के अनुसार गुरू अमरदास जी ने बीबी जी को बहुत समझाया कि गुरगद्दी पर कोई दावा नहीं किया जा सकता। ''पर बीबी जी ने

तृया हठ न छोड़ा। जिस का फल दसवें गुरू जी तक, जो छ: गुरू हुए हैं, वे क्लेशों में ही जीवन व्यतीत करते रहे और सोढियों के घर गुरिआई भी न रही।''

यदि उपरोक्त साखी को ठीक मान लिया जाय तो बाद के गुरू साहिबान की शहीदियां, साहिबजादों की शहीदयों का कारण, बीबी भानी जी का त्रिया हठ ही बनता है न कि समय के जालिम हाकिमों के अत्याचार। फिर तो गुरू तेग बहादुर जी की शहीदी भी धार्मिक स्वतंत्रता की खातिर न हो कर बीबी भानी जी के हठ के कारण ही हुई मानी जाएगी जो गुरगद्दी की कृपा के गुरमत आधार और इतिहासिक तौर पर गलत है।

वैसे उपरोक्त घटना का जिस तरह वर्णन किया गया है, वह भी असंभव है। बीबी जी गुरू पिता को स्नान करा रहे थे तो उन का ध्यान स्नान करवाने में होगा न कि वे लगातार पाए की ओर देख रहे होंगे। यदि पाया टूट ही गया तो उन्होंने इतनी फुर्ती से चौकी के नीचे पांव कैसे रख दिया ? पांव, पाए के नीचे रखने के लिए बीबी जी यकदम हिले होंगे। इस हलचल का गुरू जी के वृद्ध शरीर को जरूर आभास हुआ होगा। वह भी नहीं हुआ, उधर बीबी जी बहुत सहज से स्नान करवाते रहे। अत: यह साखी ही मनोकल्पित है।

गुरू रामदास जी को गुरगद्दी प्राप्त होने का मूल कारण तो वही है, जिस की चर्चा हम पहले ही विस्तार से कर चुके हैं। उन को इस जिम्मेवारी को निभाने के योग्य जानकर और गुरमत गुणों से भरपूर होने के कारण ही गुरिआई मिली थी।

रामकली की वार में रबाबी सत्ता व बलवंड ने इस बात को बल दे कर कहा है कि प्रभु अकाल पुरख ने गुरु रामदास को स्वयं पैदा किया है, और स्वयं ही सुंदर बनाया है। प्रभु ने अपने आप को गुरू रामदास में टिका दिया है और यह एक मुकम्मल करामात हुई है। सब सिखों ने व संगत ने उस को अकाल पुरख का रूप जानकर वंदना की है। यथा :

धंनु धंनु रामदास गुरू, जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ।।
पूरी होई करामाति, आपि सिरजणहारै धारिआ।।
सिखी अतै संगती, पारब्रहमु करि नमसकारिआ।। (पृ ९६८)

अत: गुरू रामदास जी प्रभु और सतगुरू (गुरू अमरदास जी) की इच्छा

से ही गुरू बने थे, न कि किसी अन्य के कारण। **राजु जोगु तख्तु दीअनु गुरू रामदास।।**

साहिब श्री गुरू रामदास जी को गुरिआई मिलने का वर्णन भट्ट नलः जी इस प्रकार करते हैं :

राजु जोगु तख्तु दीअनु गुरू रामदास।।

भाव प्रभु ने राज और योग का तख्त (गद्दी) श्री गुरू रामदास जी को प्रदान कर दी है। राज जहां सांसारिक प्रभुसत्ता का प्रतीक है, वहीं योग आध्यात्मिक सत्ता का प्रतीक है।

राज और योग की बात को समझाते हुए भट्ट कलसहार जी कहते हैं कि सतगुरू रामदास जी ने अकाल पुरख का स्तुति-गायन रूपी चंदोआ ताना है। सारे युग (भाव, सारे युगों के जीव) उसके आश्रय में आए हैं। ज्ञान आपके हाथ में भाला है, अकाल पुरख का नाम आपका सहारा है, जिस की कृपा से सारे भगत संतुष्ट हो रहे हैं इसी नाम की कृपा से गुरू नानक देव जी, गुरू अंगद साहिब, गुरू अमरदास जी और अन्य भक्त अकाल पुरख में लीन हुए हैं। हे गुरु रामदास जी ! आपने भी राजयोग के इस स्वाद को पहचाना है :

सतिगुरि खेमा ताणिआ, जुग जूब समाणे।।
अनुभउ नेजा, नामु टेक, जितु भगत अघाणे।।
गुरु नानकु अंगदु अमर, भगत हरि संगि समाणे।।
इहु राज जोग, गुर रामदास, तुमः हू रसु जाणे।।१२।।

(पृ १३९८)

(पद अर्थ : खेमा- चंदोआ। जुग जूब - युगों के समूह, सारे युग। अनभउ- ज्ञान।)

राज तथा योग के तख्त पर शोभायमान होने वाले सिख सतगुरू जी के शीश पर छत्र झूलता था। यह छत्र प्रभु के अटल राज्य का प्रतीक था। इस तख्त को छत्र के मालिकों ने, प्रभु का आदेश, संसार में प्रसारित किया था। इन्होंने दीन और दुनियां - दोनों क्षेत्रों में अगवाई दी।

श्री गुरू रामदास जी के राज योग के सिंहासन पर शोभायमान होने का वर्णन भट्ट सल्ल जी इस प्रकार करते हैं :

सिरि आतपतु सचौ तखतु,
जोग भोग संजुतु बलि।।
गुर रामदास, सचु सलः भणि,
तू अटलु राजि अभगु दलि। (सवईए, महले चउथे के, पृ १४०६)

अर्थ : आपके सिर पर छत्र है, आपका तख्त सदा अटल है, आप राज और योग दोनों का आनंद लेते हैं और बलि हैं। हे सल्ल कवि, तूं सच कह, हे रामदास ! तूं अटल राज वाला व अनाशवान सेना बल वाला है।

भट्ट कवि कलसहार जी कहते हैं कि सच्चे तख्त पर बिराजमान हो कर गुरु अमरदास जी ने, गुरू नानकदेव जी की कृपा और गुरू अंगद देव जी द्वारा प्रदत्त सुंदर बुद्धि द्वारा अकालपुरख के आदेश को प्रचलित किया है और श्री गुरू रामदास जी ने इसी तख्त पर बिराजमान हो कर अटल और अविनाशी हरी की पदवी प्राप्त कर ली है। यथा :

नानक प्रसादि, अंगद्र सुमति,
गुरि अमरि अमरु वरताइओ।
गुर रामदास कलःचरै
तै अटल अमर पदु पाइओ।। (सवईए, महले चउथे के, पृ १३९७)

श्री गुरू रामदास जी का गुरगद्दी पर शोभायमान होने का वर्णन भाई गुरदास जी ने इन शब्दों में किया है :

बैठा सोढी पातिसाह, रामदास सतिगुरू कहावै।।
पूरन ताल खटाइआ, अमृतसर विचि जोति जगावै।।
(वार १, पउड़ी ४७)

भाई नंद लाल सिंघ जी *गंजि नामा* में लिखते हैं :.... .....गुरू नानक की पहली पातशाही ने, अपनी नूरानी किरणों से रौशन किया। रामदास गुरू भी उसी नूर का उभरता प्रकाश है। वह सिदक सफाई की सल्तनत का निगाहबान है। वह पातशाही भी है और फकीर भी......।

उपरोक्त कुछ प्रमाणों में हम देखते हैं कि गुरू साहिब के गद्दीनशीं होने की तुलना किसी बादशाह के सिंहासन पर बैठने से की गई है। अकालपुरख के सिंहासन पर बैठ कर दैवी आदेश को चलाने की बात भी की गई है। इस के अतिरिक्त चंदोआ तानने, सिर पर छत्र झुलाने, अटल राज के

मालिक होने, हाथ में ज्ञान का भाला पकड़ने, अनाशवान फौज का मालिक होना...... आदि शब्दावली राजदरबार और शूरवीर राजाओं के लिए प्रयोग की जाने वाली शब्दावली है। ऐसे ही और अनेकों शब्द रामकली राग में, सत्ते बलवंड की वार, भट्टां दे सवैये, भाई गुरदास जी की बाणी और अन्य ग्रंथों में देखे जा सकते हैं।

भाई बलवंड राय ने गुरू नानक देव जी द्वारा धर्म का राज्य स्थापित करने का वर्णन इन शब्दों में किया गया है :

नानकि राजु चलाइआ, सचु कोटु सताणी नीव दै।।
लहणे धरिओनु छतु सिरि, करि सिफती अमृतु पीवदै।।
मति गुर आतम देव दी, खड़गि जोरि पराकुइ जीअ दै।।
गुरि चेले रहिरासि कीई, नानकि सलामति थीवदै।।
सहि टिका दितेसु जीवदै।।१।।
लहणे दी फेराइऔ, नानका दोही खटीऔ।।
जोति ओहा, जुगति साइ सहिकाइआ फेरि पलटीऔ।।
झुलै सु छतु निरंजनी मलि तखतु बैठा गुर हटीऔ।।
करहि जि गुर फुरमाइआ, सिल जोगु आलूणी चटीऔ।।

(रामकली की वार, राइ बलवंडि तथा सतै डूमि आखी, पृ ९६६)

(**अर्थ :** गुरू नानकदेव जी ने सत्यरूप किला बना कर, पक्की नींव रख कर (धर्म का) राज्य चलाया है। गुरू अकालपुरख द्वारा प्रदत्त मति-रूप तलवार के द्वारा, बल से और जोर लगा कर आत्मिक जीवन प्रदान कर, लहणा जी के सिर पर जो कि स्तुति गायन द्वारा आत्मिक जीवन देने वाला नाम जल पी रहे थे, गुरू नानक देव जी ने (गुरिआई का) छत्र धारण किया। आपके अस्तित्व में ही गुरू नानक देव जी ने अपने सिख, बाबा लहणा जी के आगे माथा टेका और सतगुरू जी ने अपने जीवनकाल में ही गुरिआई प्रदान कर दी। फिर गुरू नानक साहिब की महानता की धूम की कृपा से बाबा लहणा जी की महानता की धूम मच गई। क्योंकि उन में भी वही (गुरू नानक जी वाली) ज्योति थी और जीवन का ढंग भी वही था। गुरू (नानक) जी ने केवल शरीर ही बदला था। अब बाबा लहणा जी के सिर पर ईश्वरीय छत्र झूल रहा है। आपने (नाम सौदा बांटने के लिए) गुरू की दुकान की हासिल कर ली है और गुरू नानक

साहिब के फुर्माए हुए आदेश का पालन कर रहे हैं। आदेश पालन रूपी योग की कमाई, बिना नमक की सिल को चाटने के समान है।

धार्मिक संसार में राजनीतिक शब्दावली का प्रयोग किया जाना कोई सहज बात नहीं थी। बल्कि यह सिख सतगुरू द्वारा समाज को धार्मिक, सामाजिक क्षेत्रों के साथ-साथ राजनीतिक क्षेत्र में अगवाई देने का प्रतीक था। सिख सतगुरू द्वारा प्रदत्त राजनीतिक सूझ के कारण, सिखों के मनों में समय के हाकिमों का डर जाता रहा था। सिख उन को *ए भूपति सभ दिवस चार के* और *झूठे करत दिवाजा* समझने लग गए थे। वे राजाओं को झूठे बादशाह व गुरू साहिबान को सच्चा पातशाह कहने लग गए थे। सिख संगत में आई राजनीतिक चेतना का वर्णन डा. जीत सिंघ सीतल ने बहुत ही भावपूर्ण शब्दों में किया है। आप लिखते हैं :

...गुरू रामदास जी पर उस मिशन का मनोरथ जो गुरू नानक देव जी ने सिख धर्म की स्थापना से आरंभ किया था, दिन-प्रति-दिन प्रफुल्लित व विकसित होने लगा और जो राज प्रभावी शब्दावली गुरू नानक ने संसारी बादशाहों के प्रति प्रयोग करके सच्ची पातशही पर लागू करनी थी, वह वास्तविक रूप धारण करने लगी।

रामदास गुरू पहली बार सोढी सुल्तान के नाम से प्रसिद्ध होने लगे। सुल्तान अरबी का शब्द है, जिस के अर्थ हैं : स्वतंत्र बादशाह, शहनशाह मुतलिक शक्ति का स्वामी, पूर्ण अधिकार प्राप्त व शासन का मालिक, जिस का शब्द ही कानून था और जिस के फुर्मान या आदेश को दुनियां की कोई शक्ति मोड़ नहीं सकती थी।......

देश की अधोगति व मंदी मानसिक स्थिति को देखकर गुरू नानक जी ने सत्य का राज्य व *सच दा अमर* चलाया। सिख धर्म के नित्यप्रति नियम व कर्म की सारी शब्दावली ही सुलतानों वाली प्रचलित कर दी। झूठे सुल्तानों की जगह पर सच्चे सुल्तान और संसारी पातशाहों के मुकाबले पर सिख गुरू, सच्चे पातशाह के नाम से गुरसिखों के हृदयों पर सच्चा राज करने लगे। सुल्तान या बादशाह के दरबार की जगह गुरू के दरबार या दरबार साहिब ने ले ली। बादशाहों के दीवानों की तरह संगत के दीवान लगने लगे। सच्चा गुरू सच्चे

तख्त पर बिराजमान होने लगा और सेवादार (चवर बरदार) शीश पर चवर झुलाने लगा। यह रीति आज तक कायम है और श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी, सिख संगत के सुल्तान पातशाह तख्त चवर के मालिक हैं।''

सिख संगत में आई जागृति, तात्कालिक हाकिमों के लिए ललकार थी। किसी अन्य का राजा कहलाने व दरबार लगा कर सुशोभित होने को, संसारी राजा सहार नहीं सकते। इसीलिए जहांगीर ने *तुज़के जहांगीरी* में गुरू दरबार को झूठ की दुकान कहा और किसी संभावित बगावत से भयभीत हो कर, गुरू अर्जुन देव जी को शहीद कर दिया। पर इसके साथ राज योग की विचारधारा समाप्त नहीं हुई, बल्कि यह मीरी पीरी के संकल्प में विकसित हुई। सिखों की राजधानी, श्री अमृतसर में, गुरु हरिगोबिंद पातशाह ने श्री अकाल तख्त का निर्माण किया जहां से सिख संगत के नाम हुकमनामे जारी होते।

गुरू दरबार की चमक दमक और अधिक तेजस्वी हो गई। बाहर चांदी की चौबा पकड़े चोबदार खड़े होने लगे। गुरू के शीश पर चंदोआ ताना जाता, चवर की जाती। दीवान की समाप्ति पर गुरू साहिब के प्रवचनों को सिख शाही फुरमानों से अधिक सम्मान देते और इस को हुकम लेना कहते। फरियादों की तरह अरदास होती। नौबत की जगह पर नगारा बजने लगा। राजाओं की तरह ही गुरू साहिब भी सेनाएं रखने लगे।

इस प्रकार वह सच्ची पातशही जिस की रूप रेखा गुरू नानक पातशाह ने अंकित की थी, श्री गुरू रामदास जी के समय अस्तित्व में आनी आरंभ हुई और गुरू हरिगोबिंद पातशाह के समय तक पूर्ण यौवन में पहुंच गई।

***

(5) गुरिआई के प्रारंभिक वर्ष

गुरू अमरदास पातशाह गुरिआई की जिम्मेवारी गुरू रामदास जी को सौंप कर 1 सितंबर 1574 को ज्योति में विलीन हो गए। उस समय जो उपदेश उन्होंने सिख संगत को दिए, वे रामकली राग में सद् बाणी के शीर्षक से दर्ज हैं जो कि उन के पड़पोते बाबा सुंदर जी की रचना है। इस बाणी में जहां गुरू अमरदास जी का, परलोक गमन की तैयारी व मृतक क्रिया संबंधी गुर मर्यादा का वर्णन है, वहीं गुरू रामदास जी के गुरू बनने का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

हरि भाइआ सतिगुरु बोलिआ, हरि मिलिआ पुरखु सुजाणु जीउ।।
रामदास सोढी तिलकु दीआ, गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ।।
सतिगुरु पुरखु जि बोलिआ, गुरसिखः मंनि लई रजाइ जीउ।।
मोहरी पुतु सनमुखु होइआ, रामदासै पैरी पाइ जीउ।
सभ पवै पैरी सतिगुरू केरी, जिथै गुरू आपु रखिआ।।
कोई करि बखीली निवै नाही फिरि सतिगुरू आणि निवाइआ।।
हरि गुरहि भाणा दीई वडिआई, धुरि लिखिआ लेखु रजाइ जीउ।।
कहै सुंदरु सुणहु संतहु, सभु जगतु पैरी पाइ जीउ।।६।।

(रामकली, सदु, पृ ९२३)

अर्थ : अकाल पुरख को प्यारे लगे गुरू (अमरदास जी) ने उस समय ऐसा कहा – ''सतगुरू को सुजान अकाल पुरख मिल गया है।'' फिर गुरू अमरदास जी ने सोढी (गुरू) रामदास जी को गुरिआई प्रदान की और गुर शबद रूपी सच्ची राहदारी प्रदान की। गुरू अमरदास जी के वचन करने पर सभी सिखों ने उनका आदेश मान लिया। उनके पुत्र बाबा मोहरी जी गुरू रामदास जी के पैरों पर शीश निवाकर पिता (गुरू अमरदास जी) के सामने निवृत्त होकर खड़े हो गए। गुरू रामदास जी में गुरू अमरदास जी ने अपनी आत्मा टिका दी इसलिए सारे लोग गुरू रामदास जी के पैरों आ पड़े। यदि कोई निंदक पहले नहीं झुका, उसको भी गुरू अमरदास जी ने(का) पैरों पड़वा दिया। सुंदर कहता है – हे संतो ! सुनो, अकाल पुरख और गुरू अमरदास जी को यही अच्छा लगा,

उन्होंने गुरू रामदास जी को महानता प्रदान की, पीछे से अकाल पुरख का यही आदेश लिखा हुआ आया था। इसीलिए सारा संसार गुरू रामदास जी के पैरों पड़ गया ।६।

गुरू अमरदास जी के सपुत्र बाबा मोहरी जी ने तो गुरू रामदास जी को सच्चे दिल से गुरू स्वीकार कर लिया पर बाबा मोहन जी अहंवश पिता गुरू के आदेशों पर न चले। बल्कि पगलों की तरह गुरू-निंदा करने लगे। दुविधा बढ़ती देख कर गुरू रामदास जी एकांत में चले गए। घर में ही रहते और दीवान में न आते। यह समय उन्होंने विरह की चोट खा कर प्रेम की कसक में गुजारा, प्रभु चरणों में लीन रहे।

एकांत वास का समय, सिखों के लिए था गुरू प्यार व श्रद्धा की परीक्षा का समय थी। बाबा मोहन जी व कुछ अन्य निंदकों की हरकतों का संगत पर बल्कि विपरीत असर हुआ। संगत गुरू दर्शनों के लिए विहवल हो उठी। कुछ मुखी सिख बाबा बुढा जी की अगवाई में एकत्र हुए। सिख इतिहास ने उन के नाम - *भाई सचनि सच,* माणक चंद, डले निवासी सिख, भाई सावणमल, भाई माई दास, भाई गौगे जी, बीबी मथो व मुरारी, भाई फिरिया कटारा, भाई खेडा सइनी, भाई बेणी पंडित, भाई हिंदाल आदि दिये हैं। बाबा मोहरी जी भी साथ ही थे।

बाबा बुढा जी व अन्य सिख गुरू जी के पास चुप-चाप जा बैठे। गुरू जी प्रभु भक्ति में लीन थे। नयन खोले तो बाबा जी ने विनती की कि संगत व्याकुल फिर रही है। गुरू अमरदास जी आपको अपनी जगह पर बिठा गये हैं अब और न तरसाओ :

'सभिहिन महि बैठहु हरखावहु।
उपदेसहु सतिनाम जपावहु।।

संगत का प्रेम देख कर आपने एकांतवास त्याग दिया। रोज दीवान में संगत को दर्शन दीदार देने लगे और गुरगद्दी की जिम्मेवारी निभाने लगे। संगत की प्रसन्नता की सीमा न रही। गुरू जी को अपने बीच देख कर सिख इस तरह चहके जैसे चकौर चंद्रमा को देख कर खुशी में झूमता है :

सतिगुर मुख देख संगत बिगसाइ।
जिम चंद चकोर निरखत टक लाइ।

गुर दरबार विच सिधां दा आउणा।

सिध योगियों का तब काफी प्रभाव था। जहां यह करामाती शक्तियां (नाटक-चेटक) द्वारा आम संसारियों को भ्रमित किए रखती थीं, वहीं धर्म सिद्धांतों की चर्चा में भी प्रवीण थीं। इनका वास्ता गुरू नानक देव जी के साथ गोरख मता (अब नानक मता) सुमेर पर्वत पर अचल वटाले में हुआ था। इन्होंने अपने मत की खूबियों को बहुत चुतराई से पेश किया था। पर गुरू जी की अकाटय दलीलों और गुरमत मार्ग की व्याख्या के कारण इन को हमेशा ही मुंह की खानी पड़ी थी। *'धंन नानक तेरी वडी कमाई'* और *'वडा पुरखु प्रगटिआ, कलिजुग अंदर जोत जगाई'* कह कर सतगुरू जी की व गुरमत की उच्चता के सम्मुख उनको शीश झुकाना पड़ा था। गुरू अंगद पातशाह के दरबार में भी आए थे, पर सतगुरू जी की *गरीबी-मदा* के भाव के कारण नमस्कारें करते हुए चले गए थे।

गुरू रामदास जी ने गद्दीनशीं होने के पश्चात भी सिद्धों का टोला एक दिन गुर दरबार में आ पहुंचा। हठी स्वभाव के अनुसार उन्होंने चर्चा आरंभ कर दी। सतगुरू जी को कहने लगे कि तुम सिखों को अष्ट योग तो सिखलाते नहीं। उसके बिना मन वश में नहीं आ सकता और भटकन नहीं मिट सकती। मन की शांति के बिना आत्म दर्शन नहीं होता। आत्म दर्शन केबिना जुगत नहीं, और जुगत के बिना मुक्ति नहीं, बेचारे सिखों का क्या होगा?

हे गुर तुमरी संगत देखी। कुछ जोग साधना जगत न पेखी।
बिनां जोग मन होए न शांत। बिन जोग नहीं मिटे भ्रांत।
जोग ते होए गिआन प्रगास। पाए गिआन मुकत सुख रास।

(साखी दूजी, पातशाही चौथी, महिमा प्रकाश)

शांत स्वभाव सतगुरू जी ने योगियों को बहुत धैर्य से समझाया कि गुरसिख शब्दगुरू की अगवाई में चल कर प्रभु के स्तुति गायन में मन (ध्यान) जोड़ते हैं। अमृत बेला में *उठि हरिनाम ध्याते हैं,* गुर संगत में जा कर प्रभु के गुण गायन करते हैं, दिन भर गुर उपदेश की कमाई करते हैं, *हथ कार वल चित करतार वल* के सुनेहरी उपदेश को दृढ़ किये रखते हैं। यही जीवन की असली युक्ति है। यही युक्ति है जिस से विकारों से मुक्ति प्राप्त हो जाती है और प्रभु का सामीप्य प्राप्त होती है गुरसिख-योगी, माया में उदास रहते हुए

जहां अपना जीवन सफल करते हैं, वहीं अपने आस-पास के वातावरण को भी प्रभावित करते हैं और अपने ही आध्यात्मिक रंग में रंग देते हैं। इस के विपरीत योगी, पारिवारिक जिम्मेवारियों से मुंह मोड़ कर पहाड़ों कंद्राओं में भटकते फिरते हैं। कठिन साधना करते हैं पर मन फिर भी वश में नहीं आता है। सारी ज्ञानेंद्रियां और कर्मइंद्रिया मन के वश में हैं। जब मन ठीक दिशा में चल पड़ा तो शरीर के ज्ञान और कर्मइंद्रियों को ठीक राह पर चला लेता है और मनुष्य प्रभु प्रीति के द्वारा प्रभु में लीनता प्राप्त कर लेता है। यही तो है मुक्ति।

गुरू पातशाह का उपदेश सुनकर योगी निरुत्तर हो गए। आए तो थे संगत में अपना प्रभाव बनाने के लिए, पर गुर ज्ञान के प्रकाश में अपने मत का खोखलापन ही जाहिर करवा बैठे।

(ख) तपे ने सिखी धारण की :

पंजाब में सिद्धों, योगियों, नाथों का बहुत जोर रहा है। साधारण ग्रामीण जनता पर ये लोग जनता की समझ में न आ सकने वाले कौतुकों के कारण अपना प्रभाव जमाए रखने में काफी सफल रहे हैं। इसी प्रकार साधुओं की एक और श्रेणी, तपे भी, शरीर को कष्ट देने वाले कर्मों (तप साधनाओं द्वारा) लोगों को भ्रमित किए रखते थे। एक टांग पर खड़े हो कर पूजा करना सर्दी के मौसम में पानी में खड़े हो कर तपस्या करना, एकबारगी कितने ही शीतल जल घड़े के पानी से नहाना, ज्येष्ठ आषाढ़ के दिनों में उपलों का घेरा बना कर, उस को आग लगाकर, बीच में बैठ जाना, आदि तप कर्मों के प्रदर्शन करके लोगों को हैरान करके, ये अपनी शक्ति की धाक जमाते थे। लोग इन की अन्न, दूध, कपड़ों धन आदि से सेवा किया करते थे।

ऐसा ही एक तपा गोइंदवाल में ही रह रहा था। पर गुरू साहिब के प्रचार ने लोगों में उस की दशा को बहुत दयनीय बना दिया था। लोग समझ गए थे कि तपा तो केवल शुहरत का भूखा है, हड हरामी है, धन का लोभी है। न तो उस को आध्यामिक ज्ञान है, न ईश्वर के दर का कुछ पता है और न ही वह लोगों के दुख सुख में उन की कोई सहायता ही कर सकता है।

लोगों में घटती हुई मान्यता के कारण तपा बहुत कुढ़ता रहता था। अज्ञानी मनुष्यों में प्रचार भी करता था कि सिख काहे के धर्मी पुरुष हैं? न तो जप तप करते हैं और न कोई योग साधना, किसी वेद शास्त्र को भी नहीं मानते, पुन्यदान, तीर्थ यात्रा नहीं करते, मजार मढ़ियों की पूजा नहीं करते, देवी देवताओं को नहीं मानते, बस अपने गुरू की बाणी का पाठ और कीर्तन ही करते हैं। जाति अभिमानी, पुरातन पंथियों व अपने चेले चाटड़ों के उकसावे में आ कर, वे एक दिन गुरू दरबार में आ पहुंचा और गुरू पातशाह को कहने लगा :

तुमरे सिख दीसै अभिमानी
बेद, पुरान तीरथ नहीं जानी।
तुमरे सिख तुमही को जाने।
वाहिगुरू मुख जाप बखाने।
नहीं दीसै इनको धरम सुभाउ। (महिमा प्रकाश, साखी ३, पातशाही ४)

इस प्रकार सिखों की मुक्ति कैसे होगी। इन को स्वर्गों की प्राप्ति कैसे होगी ? गुरू जी तपे की चालाकी को ताड़ तो गए पर बहुत धैर्य से उसको समझाया कि यह बातें जो आपने कही हैं हमने उनमें से सिखों को निकाल लिया है। ये अब वेद शास्त्रों की रीतियों व कर्म कांडों के दास नहीं रहे। स्वर्गों की इच्छा, नर्कों के भय, सांसारिक सुखों की प्राप्ति आदि विचारों से पूरी तरह मुक्त हो चुके हैं। अपने अहं का पोषण करने वाले काम नहीं करते। बल्कि सभी मनुष्यों में एक प्रभु की ज्योति जानकर उन की सेवा करते हैं और अपने मन में नम्रता धारण करते हैं। जो कुछ तुम तप-साधना द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते, ये प्रभु के यश गायन (नाम का जाप करके) प्राप्त कर लेते हैं। गुणी निधान प्रभु का गुण गायन करके अपने आपको अटल आत्मिक गुणों से भरपूर कर लेते हैं। इस प्रकार ये पारिवारिक जिम्मेवारियों को निभाते हुए लोक परलोक सुहेला कर लेते हैं। तुम तो केवल शरीर को कष्ट देने वाले कर्म करके लोगों में फोकी शोहरत हासिल करते हो या धन आदि प्राप्त करते हो। कुछ लोगों को सेवक भी बना लेते हो, इस से आगे कुछ भी नहीं। न तो ईश्वर के दर का आपको ज्ञान होता है और न ही प्रभु प्रीति का आनंद आप प्राप्त कर सकते हैं। लोगों की सेवा तो क्या करनी, बल्कि लोगों पर बेकार का भर बने

रहते हो। नाम का जाप किया करो। मन संतोष में रहता है सारी इच्छाएं समाप्त हो जाती हैं। त्याग कुर्बानी व सेवा की भावना मन में उठने लगती है। लोक परलोक संवर जाता है।

गुरू साहिब का एक-एक शब्द तपे के मन पर जादुई असर कर रहा था। कर्मकांडों की निरर्थकता को वह जानता ही था। गुरू जी के उपदेश का उसके मन पर इतना प्रभाव हुआ कि वह गुरू जी के चरणों में गिर पड़ा। सिखी दान प्रदान करने की विनती की। सतगुरू जी कृपा के सागर में आए और तपे को सिख संगत में शामिल कर लिया। वह पाखंड त्याग कर सेवा का जीवन व्यतीत करने लगा।

तजि परवंड गुर को सिख होइओ।
मिलि सति संगति महि सुख जोइओ। (सूरज प्रकाश, रास दूसरी, अंश ३)

(ग) धार्मिक जागृति :

सिख संगत भारी संख्या में गुर-दरबार में आती थी। गुर उपदेश ग्रहण करती और प्रभु के रंग में रम जाती। जब वापिस अपने क्षेत्र में जाती तो गुरू महिमा की कथाएं लोगों को सुनाती। सिद्ध योगी, तपे अन्य साधु संत भी गुरू पातशाह के संग प्रवचन करके चले जाते तो गुर-ज्ञान के चमत्कार को आंखों देखते और गुरू जी की शिक्षाओं की प्रशंसा करते। इस तरह गुरमत प्रचार का काम सहजे ही होने लग गया। आप जी ने मंजीदारों को एकत्र भी किया और उनको धर्म प्रचार का कार्य लगन से निभाने के लिए उत्साहित किया। मंजीदारों को समझाया कि कोई भी अपनी न चलाए। सारे गुरू नानक देव जी के उपदेशों का प्रचार करें, शबद का लंगर लगाएं।

इन्हीं दिनों में ही भाई गुरदास जी जम्मू से प्रचार करके वापिस पहुंचे थे। आप ने उन को आगरा की ओर जा कर धर्म प्रचार करने का आदेश किया। भाई गुरदास जी जहां पंजाबी, संस्कृत व फारसी के विद्वान थे, वहीं हिंदी व बृज भाषा के भी तकड़े विद्वान थे। गुरू जी से आज्ञा ले कर आप आगरा की ओर चले गए।

(घ) अमृतसर में रौनक :

गुरू अमरदास जी के ज्योति में विलीन होने के पश्चात अमृतसर शहर के निर्माण कार्य की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जा सका था। अधूरे काम को संपूर्ण करने के लिए गुरू रामदास जी ने अमृतसर जाने का फैसला कर लिया।

गुरू जी के अमृतसर में आने से और पक्के तौर पर यहां पर निवास करने से, यह निर्माणाधीन शहर, सिख संरगर्मियों का केंद्र बन गया। सिख संगत भी भारी संख्या में आने लगी। नगर के निर्माण का काम तेज़ी पकड़ने लगा। अमृतसर सरोवर की खुदाई फिर आरंभ की गई। यह काम तीन चार वर्ष में संपूर्ण हुआ।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि सन 1577 में गुरू जी ने और जमीन खरीदी थी। मकानों आदि के बनने से नगर की आबादी खासी बढ़ गई थी। 1577 से 1581 तक नगर का निर्माण कार्य जारी रहा। सिख संगत और निर्माण कार्य में लगे राज, मिस्त्री, मजदूरों व अन्य कारीगरों के लिए लंगर के प्रबंध का विशेष ध्यान देना जरूरी था। बाबा बुढा जी इस संबंध में विशेष सेवा निभा रहे थे। आप उस बेरी के नीचे, जो कि अब तक दरबार साहिब की परिक्रमा में कायम है तथा *बाबा बुढा जी की बेर* के नाम से प्रसिद्ध है, गुरू का लंगर उन सिख सेवकों में बांटते थे।

गुरू जी स्वयं उन मकानों में रहते थे जिन को गुरू के महल कहा जाता है। निजी लंगर के लिए अन्न-पानी का इंतजाम अपने बड़े सपुत्र पृथी चंद के सपुर्द किया हुआ था। इसके साथ ही वह बाबा बुढा जी की निगरानी में नगर के निर्माण के काम में और सामूहिक लंगर की सेवा की निगरानी भी करते थे। साझा लंगर दिन-रात, हर समय जारी रहता था। श्री गुरू रामदास जी का खास आदेश था कि सेवा के लिए हमेशा तत्पर रहें। आए-गए मुसाफिर, यात्री, अभ्यागत व कारीगर-मजदूरों की सेवा करो और लंगर पानी पूछ कर वाहिगुरू की खुशियां प्राप्त करो। अपने इन आदेशों के फलस्वरूप सिख संगत जलपानी बांट कर, पंखा हवा करके, थके मादे यात्रियों की मुट्ठी चापी करके व भोजन आदि करवा कर, एक दूसरे की सेवा बड़े चाव से करती थी।

जब गुरू जी स्वयं सेवा करते या करवाते थे तो एक बेरी के नीचे बैठा करते थे। वे इलाइची बेरी के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि इस को छोटी इलायची जैसे छोटे-छोटे बेर लगते थे। उस बेरी के नीचे दर्शनी दरवाजे के पास, श्री दरबार साहिब की परिक्रमा में आप की याद में अब छोटा सा गुरद्वारा सुशोभित है।

(ङ) सिखों के उज्जवल भविष्य की नींव :

अमृतसर शहर का बसना और यहां पर (पांचवें पातशाह के समय) प्रमुख धर्म स्थान श्री दरबार साहिब का निर्माण किया जाना और छटे पातशाह के समय श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण, इस नगर की कौमी व अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि का कारण बना। यह नगर एक प्रकार की सिख राजधानी बन गया। इस नगर की विशेषता के बारे में भिन्न-भिन्न विद्वानों ने अपने -अपने विचार प्रकट किए हैं।

डाक्टर सैयद मुहम्मद लतीफ ने, हिस्टरी आफ दा पंजाब पृष्ठ 253 में लिखा है कि गुरू (रामदास) जी ने अमृतसर की नींव एक केंद्रीय स्थान पर रख कर सिखों का भविष्य बतौर एक कौम के उजागर करने की नींव रखी। अब सिख एक ऐसे साझे धर्म स्थान पर एकत्र होने लग गए जहां पर भिन्न भिन्न स्थानों से पहुंच पाना आसान था और जहां की धरती भी बहुत उपजाऊ थी। इन शांत चित्त व नेक स्वभाव वाले सिखों ने अपने आदि गुरू के पदचिन्हों पर चलने का यत्न करते हुए एक सामूहिक भाईचारे व प्रेम तथा कौमी शक्ति को पक्का करने के प्रयास शुरू किये।

मुहम्मत लतीफ आगे लिखते हैं

"केंद्रीय स्थान पर श्री अमृतसर बना कर गुरू जी ने कौम की नींव रख दी। इस से ऐसा केंद्र बन गया जिस के आस-पास सिख आसानी से एकत्र हो सकते थे। सिखों ने एकत्र होने के तौर तरीके भी सीखे और अपने अंदर भक्ति भाव पैदा करके कौमी जज़्बे की तार को मजबूत किया।"

(गुरमत प्रकाश/अक्तूबर 1982/पृ 4)

इसी प्रकार के विचार पेश करते हुए *डाक्टर हरी राम गुप्ता* ने भी लिखा है : *गुरू राम दास जी ने सिखों को पवित्र सरोवर प्रदान कर, खास तौर पर संगठित किया।*

(च) नित्य की दिनचर्या :

श्री अमृतसर साहिब में निवास करते समय श्री गुरू रामदास जी का जो नित्य का व्यवहार था, उसका वर्णन महिमा प्रकाश व सूरज प्रकाश में मिलता है। सतगुरू जी पहर रात रहते जागते और शीतल जल से स्नान करके, प्रभु सुमिरन में जुड़ जाते। प्रभात होते ही गुरू के महल से उस स्थान पर आ जाते जहां पर अब श्री हरिमंद्रर साहिब सुशोभित है। संगत पहले ही उन का इंतजार कर रही होती। *दीवान सजता और अमृतमय कीर्तन* की वर्षा होती। महिमा प्रकाश (वार्ता) के अनुसार *फेर जब प्रभात होता, तब सता रबाबी चउकी भजन की करता। कीर्तन समाप्त होता तो लंगर लई आवाज़ा पैंदा। गुरू जी ते होर सारी संगत रल के लंगर छकदे।*

इस के पश्चात कुछ समय आराम करते और फिर निर्माण कार्य के निरीक्षण हेतु चल पड़ते। कई बार स्वयं भी सेवा करने लग जाते। दुपैहर के पश्चात, शाम को, फिर दीवान लगता। इस समय आप गुरबाणी की कथा करते और गुरसिखों के धार्मिक प्रश्नों के उत्तर देते तथा गुरमत दृढ़ करवाते।

बहु प्रेमी सिख को जबि आवै। तिस कउ शुभ उपदेश बतावै।

गुरसिख सतगुरू जी के मनोहर वचनों को सुनकर निहाल होते और सतगुरू जी से उन के निजी जीवन के अनुभव सुन कर धर्म मार्ग पर चलने के लिए उत्साहित होते।

फिर कुछ समय सैर करने के लिए जाते। जब चार घड़ियां दिन बाकी रहता, रात होने वाली होती तो सो दरु की चौकी लगवाते और कीर्तन होता। भिन्न-भिन्न रागों में गुरसिख कीर्तन करते, जिससे संगत बिस्माद की रंगत में रम जाती और नामरस से आनंदित हो उठती :

चार घरी बासर जबि रहै, शबद कीरतन को सुख लहैं ॥४१॥
अनिक प्रकारन के हुए राग, राग द्वैख जिन सुनि अघ भाग ॥

भाग जगे जिन के हुए लाग। लाग स्वाद जिन प्रेम सु पाग ॥४२॥

कीर्तन सभा की समाप्ति पर जब सभी अपने-अपने टिकानों पर चले जाते तो सतगुरू स्वयं यह देखते कि बाहर से आए लोगों को ठौर मिला है कि नहीं। पूरी तसल्ली करने के पश्चात बाद में विश्राम करने के लिए गुरू के महल चले जाते।

(छ) लाहौर का दौरा :

लाहौर से भाई सिहारी मल जी व अन्य सिख संगत की यह प्रबल इच्छा थी कि सतगुरू जी अपनी जन्म भूमि पर एक बार फिर चरण डालें। संगत ने विनतियां भी कीं, संगत के प्रेम को देख कर आप लाहौर आए। बिरादरी के वे लोग, जिन्होंने कभी गुरू जी को गोइंदवाल में सेवा करते हुए देख कर कहा था : *'सहुरे में रहि के मिट्टी ढोवते हो, हमारे बडिआं के सिर खाक डालते हो'*, सतगुरू जी का प्रताप देख कर चरणों में पड़ गए। सेवा, भक्ति उपकार, दया, उदारता व प्रभु प्रीति आदि गुणों से भरपूर व नम्रता से परिपूर्ण व्यक्तित्व को देख कर, लाहौर वासी गद-गद होते जाएं। बड़ा कूआं भी लगवा दिया। यहां पर भी अमृतबेला में कीर्तन होता, *आसा की वार* लगाई जाती। घर को धर्मशाला बनाने के पश्चात आप भाई सिहारी मल जी के घर आ टिके। गुरू जी के लाहौर टिकने के समय, लाहौर भी अमृतसर साहिब की भांति *सिफ़्फ़ती दा घर* बन गया। कुछ समय पश्चात वे वापिस अमृतसर आ गए।

(ज) अकबर का आगमन

गुरू रामदास जी लाहौर से वापिस अमृतसर आए ही थे कि बादशाह अकबर भी काबुल की लड़ाई से वापिसी पर सन 1579 में श्री अमृतसर आया। गुरु दरबार की शोभा और शहर की रौनक देख कर हैरान रह गया। ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने अकबर के आने का वर्णन इस प्रकार किया है :

''गुरू रामदास जी के दर्शन किये और 101 मोहरें आगे रखीं और गुरू

जी की इच्छानुसार (गुरू) अर्जुन देव जी ने उठा कर गरीबों, मुहताजों को बांट दीं। जब अकबर ने 12 गांवों की जागीर इन के नाम करने का अपने कारदार को कहा तो गुरू रामदास जी बोले फकीरों की जागीर चारो चक है। हम गुरू नानक जी के घर को किसी जागीरदार का नहीं करना चाहते।'- जिस तरह मेघ बरसे तो सावन में मच्छर, भ्रिंड आदि पैदा होते हैं और दुखदाई होते हैं वैसे ही जागीर भी काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, झगड़े पराधीनता, लड़ाई झगड़े पैदा करने वाली है।' सतगुरू जी की बेबाकी का अकबर के मन पर गहरा असर हुआ और उसने सतगुरू जी की अज़मत के सामने शीश निवाया।

***

(6) जीवन साखियां व उपदेश

(क) बाबा श्री चंद जी का दर्शनार्थ आना

श्री गुरू नानक देव जी के बड़े सपुत्र बाबा श्री चंद जी ने अपना भिन्न मत चला लिया था, जिस को उदासी मत कहा जाता है। उन के अनुयाई उदासी साधु कहलाते थे। बाबा जी के मन में भी गुरू संतान होने, ब्रहमचारी और त्यागी होने का बहुत अहंकार था। इस अहंकार वश ही उन्होंने गुरू अंगद देव जी को गुरू स्वीकार नहीं किया था और गुरू पिता (श्री गुरू नानकदेव जी) का आखिरी आदेश नहीं माना था। इस बात का वर्णन करते हुए भाई सत्ता व बलवंड ने अपनी वार में लिखा है कि गुरू नानक देव जी के पुत्रों ने उन का वचन नहीं माना और नये नियुक्त किये गए (गुरू अंगद देव जी) की ओर पीठ कर दी।

पुत्री कउलु न पालिओ, करि पीरहु कंन मुरटीऐ।।
दिलि खोटै आकी फिरनिः बंनः, भारु उचाइनिः छटीऐ।। (पृ ९६७)

बाबा श्री चंद जी गुरू अंगद देव जी के खिलाफ प्रचार करते रहे और जब भी कोई बात करते तो उन को *साडे घर दा टहिलूआ* कह कर संबोधित करते। गुरू अमरदास जी को तो वह मिलने भी न आए। गुरू रामदास जी के समय तक, गुरू दरबार और सिखी की शोभा इतनी फैल गई थी कि बाबा श्री चंद जी भी प्रभावित होने से न रह सके। वे बारठ (जिला गुरदास पुर में, पठान कोट से पहला स्टेशन शरना है। शरने से पहाड़ वाली तरफ पांच सौ मिल की दूरी पर गांव बारठ है जो रावी नदी के किनारे पर है) से चल कर श्री अमृतसर साहिब गुरू जी के दर्शनार्थ पहुंचे। साथ ही उनके अन्य साधु भी थे। सतगुरू जी ने सब को बहुत आदर सम्मान दिया। बाबा जी की उम्र 70 साल से भी अधिक हो चुकी थी। काफी वृद्ध हो चुके थे। सतगुरू जी ने अपने हाथों उन की मुट्ठी चापी व सेवा की। गुरू रामदास जी की दाढ़ी बहुत लंबी थी। बाबा श्री चंद जी देख कर मुस्कुरा पड़े और कहने लगे : इतना सुंदर दाहड़ा काहे

को बढ़ाया है? सतगुरू जी ने उत्तर दिया कि आप जैसे महापुरुषों के पैर झाड़ने के लिए। इतना सुनना ही था कि बाबा श्री चंद जी बोले कि गुरू अंगद देव जी, गुरगद्दी सेवा के बल पर ले गए और आप नम्रता व प्रेम की मूर्ति होने के कारण इस योग्य हुए। आपकी महिमा पहले भी सुनी थी, अब तो प्रत्यक्ष देख ली है।

गुरू रामदास जी ने व्यवहारिक तौर पर इस बात की शिक्षा दी कि जब कोई पद मिल जाय तो गुरसिख ने उसका अहंकार नहीं करना बल्कि हृदय में गरीबी धारण करके सेवक वाला जीवन व्यतीत करना है। गुरगद्दी की महान कृपा होने के पश्चात (हजारों लाखों तन, मन, धन वारने वाले गुरसिखों के गुरू बनने के पश्चात) भी सतगुरू जी वैसे ही नम्रता, प्रेम व सेवा का जीवन व्यतीत करते रहे थे। जैसे आप छोटे होते घुंगणियां बेचते समय और गुरू अंगद देव जी व गुरू अमरदास जी के दरबार में निष्काम सेवा किया करते थे। आज के सिख धार्मिक अग्रणी और सामाजिक व राजनीतिक लीडर, यदि कहीं सतगुरू के डाले हुए पदचिन्हों पर चल सकें तो कौम में से तरह-तरह के मतभेद दूर हो जाएं और सारा सिख भाईचारा एकता के मजबूत सूत्र में बंध जाए।

(ख) अनोखा सेवक – भाई हिंदाल :

भाई हिंदाल गुरू जी के अनन्य सिख हुए हैं। आप जिला अमृतसर के जंडियाला नगर के रहने वाले थे। आप गुरू के लंगर में दिन रात सेवा किया करते थे। आए गए यात्री की सेवा करके उन को आत्मिक सुख मिलता था। सेवा में इतने लीन रहते थे कि गुरू दरबार में जाने का समय भी कभी-कभी ही मिलता था। वैसे हाथ सेवा की तरफ व सुरति शबद में जुड़ी रहती थी। भाई साहिब के ऊंचे व निर्मल जीवन के कारण सिख संगत उन को बहुत सम्मान से देखती थी। उन की सेवा की सुगंधि गुरू रामदास जी तक भी जा पहुंची। एक दिन सतगुरू जी भाई हिंदाल जी को देखने के लिए लंगर में स्वयं आ गए। भाई साहिब आटा गूंथ रहे थे। सतगुरू जी को देख कर हैरान रह गए। हाथ धोने का अवसर भी न मिला पर आटे से गुंथे हाथों से गुरू चरणों पर नमस्कार करने में उन्होंने निरादर समझा। आटा लगे हाथ भाई साहिब ने पीठ के पीछे

कर लिए और घुटनों के बल हो कर सतगुरू जी के चरणों पर गिर गए। उन का यह अनोखा ढंग देख कर सतगुरू जी मुस्कुरा पड़े। कृपा के घर में आ कर गुरसिख को थापी दी। भाई हिंदाल के उच्च व निर्मल जीवन को देखते हुए, गुरू जी ने उन को सिख धर्म का प्रचारक नियुक्त कर दिया। *खालक को खलकत* में देखना सिख धर्म का एक जरूरी सिद्धांत है। निष्काम सेवा भी, तो ही हो सकती है यदि अपने अंदर बसने वाली प्रभु की ज्योति को, सब के हृदयों में बसा हुआ अनुभव किया जा सके। ऐसे सौभाग्यशाली मनुष्य ही, धर्म प्रचार की सेवा को निभा सकते हैं।

(ग) मानसिक शांति कैसे हो

धर्म मार्ग के राहियों की प्रबल इच्छा मानसिक शांति होती है। संसार के झमेलों में मनुष्य को कई प्रकार की चिंताएं घेरे रखती हैं। माया भिन्न-भिन्न रूपों में धर्म-मार्गी की राह में आ खड़ी होती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकार मानव के मन पर हमला करते रहते हैं। दुख, बीमारी, गरीबी व अन्य मुसीबतें मनुष्य को चिंता आदि की गहरी खड्ड में डाले रखती हैं। विचारवान मनुष्य ऐसी दशा से बचने के उपाय सोचते रहते हैं। ऐसा वे केवल अपनी सुख शांति के लिए नहीं सोचते, बल्कि प्रत्येक प्राणी मात्र के कल्याण के लिए सोचते हैं और प्रयास करते हैं।

गुरू रामदास जी का एक प्रमुख सिख *भाई तीरथा* था। एक बार वह अपने रिश्तेदारों व संगी-साथियों के साथ गुरू दरबार में आया। गुरू पातशाह को विनती की कि हे पातशाह ! हमारा कलियुगी जीवों का मन नहीं टिकता है। संसार में लोग शांति के लिए भटक रहे हैं, पर मन को चैन नहीं आता। आप कृपा करके मन को बस में करने का व माया से तप रहे मन को, शांत करने का उपाय बताएं। भाई तीर्था जी की यह विनती वास्तव में उनके साथ आई संगत के कल्याण के लिए थी।

सतगुरू जी ने कहा कि सच्चे प्रभु के नाम में सुरति जोड़ने से व सत्य को जीवन का आधार बनाने से ही मन वश में आ सकता है। इसलिए हर उस पूजा को छोड़ देना चाहिए, जो मन-वृत्ति को छिन्न-भिन्न करती है। यथा:

मढ़ी मसाण पीर मकानो। मानन पूजन इनै न ठानो।

जहां सच्चे (अमर) प्रभु का स्तुति गायन करना है, वहीं व्यवहार भी सत्य का करना है - मुंह से भी सत्य बोलना है, औंर दिल का भी सच्चा रहना है। सत्य के व्यवहार से सच्चे प्रभु में अभेद हुआ जा सकता है। साखीकार ने गुरू जी के इन वचनों को इस प्रकार चित्रित किया है :

एक अकाल उपाशो पिआरे। छको, धर्म की कर सभ कारे।
करो साच का सभ बिवहार। सुख संपति जयों बढै अपार।
एक बोल इक तोल रखीजै। सुक्रित करो सरब दुख छीजै।
(सूरज प्रकाश)

(घ) जन्म और मृत्यु से मुक्ति

धर्मात्मा मनुष्यों की यह भी चाह रही है कि जन्म व मृत्यु अथवा आवागवन के भंवर से मुक्ति प्राप्त की जाय। संसार में कई तरह के धर्म कर्म इस आशय की प्राप्ति के लिए किये जाते हैं।

एक बार भाई माणिक चंद, भाई पूरो और भाई बिशन दास गुरू दरबार में उपस्थित हुए और विनती की - हे सच्चे पातशाह! कोई ऐसी राह बताओ जिस से हमारा जन्म व मृत्यु का आवागवन मिट जाए और कल्याण हो। सतगुरू जी ने वचन किया कि यह अपनत्व की भावना ही है जो मनुष्य को मोह माया के जाल में फंसाए रखती है। मैं और मेरी की भावना के अधीन किये काम मनुष्य को जन्म व मृत्यु के भंवर में डाले रखते हैं। अतः सब से पहले मैं मेरी की भावना का त्याग करो व मन में यह दृढ़ कर लो कि सब कुछ उस करतार तथापि परमपिता परमात्मा का ही है। जिस शरीर को अपना कहते हैं, यह भी अपना नहीं। यह तब तक ही कायम है जब तक इस में प्रभु की ज्योति है। बेटे-बेटियां, धन जायदाद से अपनत्व की भावना आत्मिक मृत्यु का कारण बनती है। संसार को किश्ती का मेला ही समझना चाहिए जिस में मुसाफिर मिलते तो हैं पर आपस में कोई गहरा संबंध स्थापित नहीं करते :

तजहि अपनपो तिन ते घनो। जानहि तरी मेल गन मनो।

इस प्रकार सोचने वाले सेवकजनों की प्रभु स्वयं लाज रखता है।

उनका रक्षक व पालक बन जाता है। दुखों-कष्टों की निवृत्ति भी वह स्वयं कर देता है। मेरी-मेरी की भावना को मार कर, गुर संगत व जरूरतमंदों की सेवा करनी है। वह भी केवल स्वयं ही नहीं करनी, बल्कि सारे परिवार से करवानी है। अपने आप को प्रभु के टहिल-सेवक कहलवाना है!

सतगुरू जी ने और समझाया कि जो मनुष्य ऐसे विचारों का धारणकर्ता होकर जीवन बसर करता है, उसका रक्षक स्वयं सतगुरू निरंकार बन जाता है। जैसे नौकर घोड़े की सवारी करने के पश्चात घोड़े को मालिक के दरवाजे पर ला कर बांधते हैं, तो घोड़े की सारी चिंता मालिक को होती है। वैसे ही जो स्व को छोड़ कर, प्रभु के हो जाते हैं, उन की चिंता प्रभु स्वयं करता है। चिंता गई तो मानसिक शांति आ जाती है। यथा:

जथा खसम के दर पर घोरा। चाकर चढ़ि आवहि दे छोरा।
तबि सभ चिंत खसम को होइ। खान पान दे पोखहि सोइ।३८।

(सूरज प्रकाश, रास दूजी, अंश १७)

(ङ) गृहस्थ में मुक्ति

हिंदुस्तान में प्राचीन धर्मों ने यह प्रचार किया हुआ था कि गृहस्थ में रहते हुए मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। इसीलिए मुक्ति के चाहवान आबादी से दूर जंगलों व कंद्राओं में रहना शुरू कर देते थे और अनेकों प्रकार के जप-तप करते थे। मुक्ति प्राप्त करने के इस ढंग का इतना प्रचार हुआ था कि यह लोगों के मन की गहराई तक असर कर गया था। गुरू साहिबान और अनेकों गुरसिख प्रचारकों को इस भ्रम जाल को तोड़ने के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ा। कई पुरातन पंथी, सिखों का उपहास भी करते रहते थे कि तुम्हारा धर्म तो घर बारी होने की शिक्षा देता है। आपकी मुक्ति तो हो ही नहीं सकती।

एक दिन तीन प्रेमी गुरसिखों - भाई पदारथु, भाई तारू और भाई भारू जी ने भरे दीवान में गुरू जी के सम्मुख विनती की कि हम तो गृहस्थ कुटुंब वाले हैं, परिवार का पालन करने के लिए काम धंधे में व्यस्त रहते हैं। हमारा कल्याण कैसे होगा ?

गुरू पातशाह ने उन को समझाया कि यह ख्याल मन में से निकाल दो कि परिवार को पालने वाले हम हैं। बल्कि सब को पालने वाला प्रभु स्वयं अकाल पुरख ही है। उसने हमारी उपजीविका के सारे प्रबंध किये हुए हैं। हमारा कर्तव्य इतना ही बनता है कि हम प्रभु के नाम का जाप कर, उसका स्तुति गायन करें, सच्ची सुच्ची मेहनत मजदूरी करें और अपनी नेक कमाई से जरूरतमंदों की सेवा करें या धर्म के कार्यों की पूर्ति हेतु दसवंध निकालें। आय का दशांश निकाले। इस *गुरमत गाडी राह* पर चलते हुए कल्याण अवश्य होगा।

मुक्ति प्राप्ति की यह आसान व सहज ही समझ आने वाली राह है। पारिवारिक कर्तव्य भी इस राह में कोई रुकावट नहीं बनते। जरूरत तो है केवल प्रभु पर पूर्ण भरोसे की और गुरू के बताए मार्ग पर दृढ़ता से चलने की। तीनों ही प्रेमी गुरसिखों ने गुर-उपदेशों के अनुसार अपना जीवन ढाल लिया और अंततः गुरू दर के खास सेवक के तौर पर प्रसिद्ध हुए।

पुरखु पदारथ जाणीऐ। तारू भारू दास दुआरा।

(च) आत्मिक सुख की प्राप्ति

भाई महां नंद जी व भाई बिधी चंद जी गुरू जी की शरण आए। एक दिन कहने लगे, ' हे सच्चे पातशाह जी ! सुख की प्राप्ति के लिए जगह-जगह भटकते रहे हैं पर अंतःकरण का सुख कैसे प्राप्त हो सकता है और जन्म व मृत्यु का दुख कैसे दूर किया जा सकता है ?

सतगुरू साहिब ने सहज ही कहा, 'गुरसिखो ! अपने स्वरूप को पहचानो, फिर दुख के बंधन कट जाएंगे।' तब दोनों सिखों ने कहा, 'सतगुरू जी, हम अपना स्वरूप तो यही जानते हैं कि हम क्षत्रियों के पुत्र हैं, जाट हैं। इस से अधिक हमें कुछ पता नहीं।' उत्तर सुनकर सतगुरू जी मुस्कुराए और कहा, 'यह जाट क्षत्रीय तो आपको माता पिता ने कहा है, या लोग कहते हैं। हम इस बाह्य स्वरुप की बात नहीं करते, आंतरिक स्वरूप की बात करते हैं। शरीर में कोई अन्य वस्तु भी है, जिसके आश्रय आप चल फिर रहे हो, काम काज करते हो। अंदर यदि हरि की ज्योति है, वह मूल वस्तु है। उस के बिना

तो शरीर केवल मिट्टी मात्र है। तब सिखों ने कहा, 'अपना स्वरूप कैसे पहचानें? आंतरिक ज्योति से निकटता कैसे बने ?'' गुरू महाराज जी ने वचन किया : सदा नियम से कथा कीर्तन सुनो। संगत की सेवा प्यार से करो। बाणी पढ़ो, बाणी के अर्थों पर विचार करते हुए अपने हृदय को तोलते रहो। सावधान रहो। जब मन डोलने लगे, बाणी की विचार से उसे थाम लो। ऐसा करने से स्वरूप की पहचान हो जाएगी।

सति संगति कीजहि चित लाई।
कथा नेम ते सुनीअहि कान।
गुर सिखन सेवहु हित ठानि।।१४।।
करहु बिचारन सतिगुर बानी। अरथ लखहु करि प्रीत महानी।
तिस कै साथ रिदा निज तोलहु। दुख सुख बिखै ना कबहूं डोलहु।।१५।।

(छ) गुरसिखों की सेवा

गुरू नानक साहिब ने जो संगतें स्थापित की थीं, उनका एक प्रयोजन तो प्रभु का स्तुति गायन, गुरबाणी की विचार या कीर्तन करना था और दूसरा प्रयोजन था भ्रातृत्व भाव बढ़ाना, दुख सुख में साझीदार होना, गुरसिखों में प्रेम प्यार बढ़ाना और सिख भाइचारे में समय-समय पर आने वाली कठिनाइयों का हल ढूंढना। सारे गुरू साहिबान संगत की इस महानता को अपने अपने समय में उजागर करते रहे हैं।

एक दिन भाई धर्म दास, भाई डूगर दास, भाई दीपा, भाई जेठा, भाई संसारू, भाई बूला व भाई तीरथा आदि सिखों ने विनती की कि हे पातशाह! जैसे भी हो, हमारा उद्धार करो।

गुरू रामदास जी ने इनको उपदेश करते हुए कहा कि पहले तो जाति अभिमान व कुल अभिमान (उच्च खानदान का अहंकार) को त्यागो। हृदय में नम्रता धारण करो और निंदा चुगली से बचो। निर्माण हो कर सेवा करो। कोई गुरसिख घर आए तो अपने हाथों उसकी सेवा करो। यदि उसे किसी चीज की जरूरत हो तो उसे स्वयं पूरा करो। यदि अकेले सहायता करने से उसकी कार्य

सिद्धि न होती हो तो दूसरों से धन एकत्र करके भी उसका कार्य सिद्ध कर देना है। अरदास भी करनी है। ऐसा करने से आत्मिक सुख प्राप्त होगा। यथा :

जे सिख कु हुइ काज बडेरा। बिन धन सरहि न जो अस हेरा।।
सभ मिल कर उचरहु अरदास। सभ ते इक थल कर निज पास।।
सिख को कारज दीजै सार। तबि प्रापति तुम को सुख सार।।२३।।

(सूरज प्रकाश, रास दूजी, अंश 19)

फिर फुर्माया कि जहां सुनो कि कथा-कीर्तन होना है, वहां जरूर पहुंचो। अपने क्षेत्र में धर्मशाला (गुरद्वारा) बनाने का यत्न करो। धर्मशाला में ऐसा सेवादार हो जो आने जाने वाले यात्री को आश्रय दे और अन्न-पानी से सेवा करे। अपनी जीविका अर्जन भी करो, सत्य बोलो, सत्य का धनार्जन करो। गुरू अंग-संग रहेगा। सर्वसुखों की प्राप्ति होगी और आत्मिक कल्याण होगा।

(ज) अमृतबेला की संभाल

भाई मइया, भाई जापा, भाई नइया और भाई तुलसा आदि सिखों ने विनती की कि हम तो गृहस्थ में लिपटे पड़े हैं, कोई उद्धार की राह बताओ।

गुरू जी ने उपदेश किया कि जैसा घर के काम काज को प्यार करते हो तैसा ही गुरबाणी से भी प्यार करो। पहर रात रहते, अमृत बेला में उठ कर गुरबाणी का श्रद्धा सहित पाठ करो। जब बाणी के अर्थों की ओर ध्यान दोगे तो मोह टूट जाएगा। बाणी का उच्चारण व विचार करना ही गुरू जी का सम्मान करना है। मन को हमेशा ही पूछते रहें, 'क्या गुरू द्वारा दर्शाए मार्ग पर चल रहा है ?' इस प्रकार धीरे-धीरे मन का रुख बदल जाएगा। परिवार द्वारा प्रीति कम होगी और प्रभु प्रीति जागृत होगी। दिन को भी प्रभु की याद में जुड़े रहना है, पर कारोबार नहीं छोड़ना। अमृत बेला में, प्रभु के स्तुति गायन में मन लगाने से दिन उल्लासमय व्यतीत होता है। मोह का रोग नहीं व्याप्त होगा। काम काज करते हुए ध्यान वाहिगुरू की ओर रखना है :

रिदा धरहु सतिगुर के संग। अमर क्रिया करि यहि सभ अंग।

सिखों ने गुर उपदेश हृदय में बसाया। वे गुरू प्यारे व आचारी (उच्च व निर्मल जीवन वाले) प्रसिद्ध हुए।

मईआ जापा जाणीअनि, नईआ खुलरु गुरू पिआरा।
तुलसा वहुरा जाणीऔ, गुर उपदेश अवेस अचारा।

***

(7) गुरिआई के समय के कार्य

गुरु नानक देव जी ने समाज में संपूर्ण क्रांति अथवा धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक आदि, जीवन के सभी पक्षों में नई सोच के प्रसार और इन विचारों पर आधारित नये समाज की सृजना के लिए निर्मल पंथ चलाया था। इस को गुरमुखों का पंथ, पारब्रहम का पंथ भी कहा गया। दसम पातशाह ने इस के लिए अंतिम शबद खालसा पंथ का प्रयोग भी किया। गुरु नानक साहिब द्वारा चलाया गया धर्म, वास्तव में एक क्रांतिकारी जन आंदोलन था। इस के उद्देश्यों की संपूर्णता (समाज में संपूर्ण क्रांति) के लिए लंबे समय की आवश्यकता थी। इसलिए यह काम, गुरु नानक देव जी ने दस अवतरण में लगभग 230 साल के समय में पूरा किया। प्रत्येक गुरु व्यक्ति ने गुरु नानक साहिब द्वारा निश्चित किए गए लक्ष्यों की पूर्ति के लिए भरपूर योगदान दिया। नीचे वे विशेष कार्य अंकित किए जाते हैं जो गुरु रामदास जी के गुरिआई काल में संपूर्ण हुए और जिन्होंने सिखी की लहर को मजबूत किया।

(क) केंद्रीय धर्म स्थान की स्थापना

किसी भी कौम के निर्माण में केंद्रीय धर्म स्थान का विशेष महत्व होता है। यह मात्र शहर ही नहीं होता बल्कि विशेष विचारधारा और सभ्यता का प्रतीक होता है। बाद में जा कर समूची कौम की संगठित सरगर्मियों का केंद्र भी बन जाता है। गुरु रामदास जी ने श्री अमृतसर जी की स्थापना करके, सिख कौम के केंद्रीय स्थान की नींव रखी, जिसने सिखों में कौमीयत की भावना को बल प्रदान किया। (इस केंद्र के निर्माण और विकास के बारे में पहले ही वर्णन किया जा चुका है)।

(ख) आर्थिक सुधार के लिए यत्न

किसी भी कौम के विकास और उज्जवल भविष्य के लिए उसका

आर्थिक ढांचा भी विशेष महत्व रखता है। इसीलिए गुरु नानक देव जी ने नाम का जाप करने के साथ, परिश्रम करने व मिल बांट कर खाने के सिद्धांत का प्रचार भी किया था। गुरु रामदास जी ने 52 भिन्न-भिन्न व्यवसायों के लोगों को श्री अमृतसर में बसाया था और सिखों के भीतर व्यापार करने की रुचि पैदा की थी। इस प्रकार अमृतसर में, बाद में जा कर दस्तकारी और व्यापार का बड़ा केंद्र बन गया। नये नगरों का निर्माण, धर्म प्रचार और जन कल्याण के कामों के लिए अनंत धन की आवश्यकता थी। इसलिए दसवंध की प्रथा जारी की गई। इसके अधीन प्रत्येक सिख के लिए यह जरूरी हो गया कि वह अपनी कमाई का दसवां हिस्सा साझे कौमी खजाने में जमा करवाए या स्वयं धर्म कार्यों व जनकल्याण के लिए व्यय करे। दूर-दराज की संगत से दसवंध का पैसा एकत्र करने के लिए उच्च व निर्मल गुरसिखी जीवन के धारणकर्ता और प्रचारक लगन वाले सिख नियुक्त किए गए। सिख इतिहास में इन को मसंद कहा गया है।

मसंद शब्द की उत्पत्ति, अरबी के शब्द मसनद से हुई है जिसका अर्थ है सिरहाणा, तकिया या गद्दी। उस समय हाकिम तख्त पर बड़े-बड़े गद्दे लगा कर बैठा करते थे। लोग उनको मसनद नशीन कहते थे। अनपढ़ लोग केवल इसे मसनद ही पुकार लेते, जिसका अपभ्रंश बाद में मसंद प्रचलित हो गया। मसंद क्योंकि गुरु रामदास जी ने नियुक्त किये थे, इसलिए इन को लोग रामदासिये भी कहा करते थे। बाद में इन के लिए *गुरु के शब्द* का प्रयोग किया जाने लगा, पर अधिकतर प्रसिद्ध शब्द मसंद ही रहा। यह हर साल बैसाखी और दीवाली के अवसर पर दो बार गुरु-दरबार में हाजिर हो कर गुरु साहिब को सारा हिसाब देते थे।

गुरु रामदास जी के इन प्रयासों ने कौम को मजबूत आर्थिक आधार पर खड़ा कर दिया।

(ग) धर्म प्रचार के लिए प्रयास

गुरु नानक देव जी ने अपनी लंबी लंबी उदासियों यानी प्रचारक दौरों में गुरमत विचारधारा का प्रचार किया था। इसके साथ ही उन्होंने भिन्न-भिन्न

क्षेत्रों में धर्म प्रचारक नियुक्त किये थे और संगत स्थापित की थी। गुरु अमरदास जी ने धर्म प्रचार के लिए 22 *मंजियां* व 52 *पीहड़े* स्थापित किये थे। सिखी के तेजी से हो रहे विकास के कारण इतने यत्न ही काफी नहीं थे। गुरु रामदास जी ने मसंद भी स्थापित कर दिए। ये संगत से कार भेंट (दसवंध) एकत्र करने के साथ-साथ धर्म प्रचार का काम भी किया करते थे। मसंद तीसरे पातशाह द्वारा नियुक्त किये गए मंजीदारों व पीहड़ेदारों के संग संपर्क रखते थे। उनके द्वारा एकत्र की गई कार भेंट गुरु दरबार में पहुंचाते थे। जहां यह गुरु जी के हुकमनामे और गुरु जी द्वारा संचालित कार्यों की जानकारी सिख संगत तक पहुंचाते थे, वहीं सिख संगत की हर प्रकार की खबर गुरु जी तक पहुंचाते थे। यह एक प्रकार के सिखी के दूत थे। मंजीदारों, पीहड़ेदारों व मसंदों ने सिखी संदेश को दूर तक पहुंचाया और लोगों को भारी संख्या में सिखी के दायरे में लाए।

गुरु रामदास जी ने भाई गुरदास जी को पूर्वी भारत में धर्म प्रचार की सेवा के लिए भेजा था। भाई गुरदास जी, उस समय सिखी के सब से बड़े व्याख्याकार थे और कई भाषाओं के विद्वान थे। आपने, आगरा व काशी में निवास रख कर, आस पास के क्षेत्रों में सिखी की खुशबू फैलाई। लोगों की बोली में प्रचार किया। इसी मकसद के लिए आपने बृज भाषा में कबित्त व सवैयों की रचना की।

(घ) विरासत की संभाल

श्री गुरु रामदास जी ने अपनी बाणी में गुरु नानक पातशाह जी की विशाल विरासत को संभाला। ऐसी साखियों व घटनाओं का वर्णन किया जो गुरमत मार्ग की महानता को दर्शाती हैं। गुरु निंदकों का वर्णन व उन की दुर्दशा, जाति अभिमानियों की नीच हरकतों, गुरु अमरदास जी के प्रचारक दौरों व सिखी मार्ग पर चलते हुए विभिन्न प्रकार के अनुभवों का वर्णन किया है। इसीलिए फारस्टर ने अपनी यात्राओं में लिखा है कि गुरु रामदास जी ने इतिहासिक घटनाओं, पुरखों के उपदेशों व नियमों को एक स्थान पर संकलित

किया और उन की रचना की व्याख्या करके साथ जोड़ा।[1] (आगे चलकर विस्तृत वर्णन किया जाएगा)।

(ङ) मर्यादा व रहन-सहन की रीतियों को पक्का किया

गुरबाणी में भिन्न-भिन्न स्थानों*पर गुरसिख के गुणों और उसके कर्तव्यों का वर्णन किया गया है। गुरु रामदास जी ने *गउड़ी की वार* के शबद (पृ 305) *गुर सतिगुर का जो सिख अखाए* में दैनिक जीवन की समय सारणी निश्चित कर दी है। आप कहते हैं :

" जो सतगुरु का सिख कहलाता है, वह अमृत बेला में जागता है, स्नान करने के उपरांत नाम के सरोवर में डुबकी लगाता है। गुरु के उपदेश के अनुसार नाम सुमिरन में जुड़ता है जिसकी कृपा से सब पाप व विकार समाप्त हो जाते हैं। फिर साध संगत में जा कर गुरबाणी का पाठ व कीर्तन सुनता है। दिन को धनोपार्जन करते हुए भी प्रभु को याद रखता है। ऐसा सिख ही गुरु को भाता है। सिख केवल स्वयं ही प्रभु का स्तुति गायन नहीं करता, बल्कि दूसरों को भी प्रभु सुमिरन में लगाता है और सिखी के मार्ग पर चलाता है। अंत में उनका फुर्मान है कि मैं ऐसे गुरसिख की चरण धूड़ि प्राप्त करने को लालायित हूं।"

सतगुरु जी ने अपनी बाणी में गुरमुख और मनमुख के अंतर को भी व्याख्या सहित उजागर किया है।

आप ने **अरदास** के महत्व पर बल दिया और सिखों को प्रेरित किया कि हर काम का आरंभ करते समय स्वयं प्रभु के सम्मुख अरदास करो। ब्राहमणों, पुरोहितों व अरदासियों की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके लिए हर काम करते समय - *कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ।* - पढ़ा जाने लगा और यह विश्वास किया जाता कि सतगुरु साक्षी हो कर काम को सिरे चढ़ाते हैं। इस मर्यादा के साथ सिख समाज शगुन-अपशगुन और महूर्तों आदि के भय से पूरी तरह मुक्त हो गया।

---

[1] Guru Ram Das complied the histories and precepts of his predecessors and annexed a commentary to their work (Travels-i-297) - Cuningham, History of the Sikhs [Pg: 297]

(च) लावां का पाठ

गुरु जी ने *सूही राग* में चार लावां की रचना की। इनका आंतरिक भाव, भगत रूपी स्त्री का प्रभु पति के संग मेल अथवा संयोग है। इन *लावां* को सिख वर-वधु के अनंद कारज अर्थात विवाह के समय पढ़ने की मर्यादा भी कायम कर दी। इस प्रकार आप जी ने ब्राह्मण पर निर्भर रहने की व्यवस्था को समाप्त कर दिया। विवाह के समय ब्राह्मण वेदी गाड़ कर वेद मंत्रों से विवाह की रस्म पूरी करता था, जो अब सिख स्वयं ही लावां के पाठ द्वारा करने लग गए। इस में किसी पुजारी की जरूरत नहीं। कोई भी व्यवसाय करने वाला सिख यह काम कर सकता है।

गुरु साहिबान के प्रयासों से, इस तरह से सिख जनता सहज ही ब्राह्मण के दबाव से निकलती गई और सिख धर्म हिंदू रीतियों व रस्मों से स्वतंत्र होता गया।

(छ) समाज सुधार

भारतीय समाज में स्त्रियों की बहुत दुर्दशा थी। गुरु नानक पातशाह ने *सो किउ मंदा आखीऐ जित जंमहि राजान* कह कर स्त्री की महानता को दर्शाया है। स्त्री को धर्म कार्यों व धर्म प्रचार की छूट दी। गुरु अमरदास पातशाह जी ने, पर्दे यानी घूंघट की प्रथा और सती प्रथा के विरुद्ध प्रचार किया। गुरु रामदास जी ने इस काम में बहुत योगदान किया। आपने दहेज प्रथा का डट कर विरोध किया।

समाज में से समय के हाकिमों व चौधरियों का भय दूर करना बहुत जरूरी था। यह भय ही था जिसने लोगों को सदियों से गुलाम बनाया हुआ था। गुरु जी ने समझाया कि सभी हुकमरान, सिकदार, नवाब, शाह बादशाह व चौधरी चार दिन के मेहमान हैं । प्रभु की दृष्टि में इन का कोई स्थान नहीं है। वही मनुष्य सब से उत्तम है जिसके हृदय में निर्भय प्रभु बसा हुआ है।

जितने साह पातिसाह उमराव सिकदार चउधरी
सभि मिथिआ झूठु भाउ दूजा जाणु।।..........
जितने धनवंत कुलवंत मिलखवंत दीसहि मन मेरे,
सभि बिनसि जाहि, जिउ रंगु कसुंभ कचाणु। ....
ओहु सभ ते ऊचा, सभ ते सूचा,
जाकै हिरदै वसिआ भगवानु।। (रागु गौंड महला ४ पृ ८६१)

***

(8) गुरु ज्योति गुरु अर्जुन में
(गुर जोति अरजुन माहि धरी)

श्री गुरु राम दास जी के तीनों सपुत्रों में से (गुरु) अर्जुन देव जी बहुत तीक्ष्ण बुद्धि वाले थे। गुरु नानक देव जी के आशय को उन्होंने सहज ही समझ लिया था और बाणी से अगाध प्रेम करते थे। बाणी पढ़ते, गाते, समझते और समझाते। वे इस प्रकार अपने जीवन को गुरु आशय के अनुसार ढाल रहे थे। अपने भक्तों में ही नहीं बल्कि सभी सिखों में, सिखी आशय को समझने व अपनाने में सब से आगे थे। बचपन में ही बाणी के संग प्यार और लगन के कारण ही वे अपने नाना, श्री गुरु अमरदास जी की प्रसन्नता के पात्र बने थे। उन्होंने *दोहिता, बाणी का बोहिथा* कह कर आपके भविष्य की ओर इशारा किया था।

(गुरु) अर्जुन देव जी की बाणी के प्रति लगन, सेवा-सुमिरन वाला जीवन और आदेश मानने के गुण ने गुरु रामदास जी के मन को जीत लिया था और वे (गुरु) अर्जुन देव जी को गुरगद्दी की जिम्मेवारी निभाने के योग्य समझने लग गए थे।

गुरु रामदास जी का बड़ा पुत्र, बाबा पृथी चंद बहुत चतुर व चालाक था। गुरु दरबार का सारा प्रबंध उसके अपने हाथ में था। देखने को तो वह सेवा भी करता था। पर उसके मन में सच्चा धर्मात्मा बनने की लगन कम ही थी। उसका धन से बहुत प्यार था। वह मान सम्मान का भी भूखा था। उसकी सारी सेवा का लक्ष्य गुरगद्दी प्राप्त करना था। पर (गुरु) अर्जुन देव जी के साथ पिता गुरु का अधिक प्रेम देख कर उसको बहुत ईर्ष्या होती थी। वह नहीं चाहता था कि उसका छोटा भाई गुरगद्दी का वारिस बने। इसलिए उसने गुप्त तौर पर चालें भी चलनी शुरू कर दीं - धन के स्त्रोत पर पूरा अधिकार कर लिया और मसंदों को गांठना शुरू कर दिया। ईर्ष्यावश वह कई बार गुरु रामदास जी के साथ ऊंच-नीच भी बोल जाता। वह यह भूल जाता कि गुरु रामदास जी केवल

पिता ही नहीं, बल्कि गुरु भी हैं। उसके ऐसे व्यवहार के कारण भाई गुरदास जी ने उसको **मीणा** संबोधित करते हुए भी लिखा है।

मीणा होआ पृथीआ, करि करि टेढक बरल चलाइआ।

गुरु रामदास जी के *सारंग राग* में उच्चारित शबद से यह प्रतीत होता है कि पृथी चंद कुछ अधिक ही लड़ने-झगड़ने लग गया था। धैर्य की मूर्ति गुरु रामदास जी ने उसे बहुत सहजता से समझाया,'बेटा! पिता के साथ झगड़ना कोई अच्छी बात नहीं। जिसने पैदा किया, पाला पोसा और बड़ा किया है, उसके साथ झगड़ा करना मूर्खता है। यथा:

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप।।
जिन के जणे बडीरे तुम हउ
तिन सिउ झगरत पाप।।१।।रहाउ।।

(सारंग महला ४, पृ १२००)

गुरु रामदास जी ने उसको यह भी समझाया कि जिस माया पर कब्ज़ा करके तूं अहंकारी बना हुआ है, वह धन कभी भी किसी का अपना नहीं बना। माया के चस्के का नशा तो क्षणभंगुर होता है, उतर जाता है और फिर पछताना पड़ता है।

जिसु धन का तुम गरबु करत हउ, सो धनु किसहि न आप।।
खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु, तउ लागै पछुताप।।१।।

(सारंग महला ४, पृ १२००)

बाबा पृथी चंद के पत्थर मन पर, गुरु पिता के इन उपदेशों का कोई प्रभाव नहीं हो रहा था। वह तो बस गुरगद्दी हथियाने के लिए उतावला हो रहा था।

गुरु जी के दूसरे सपुत्र, बाबा महादेव जी मस्ताने और विरक्त स्वभाव के मालिक थे। दुनियावी कार-विहार उनको झमेले प्रतीत होते थे। उनको अपने जती-सती और तपस्वी होने का बहुत अहंकार था। इस अहंकारवश वे कई बार गुरु रामदास जी को ही उपदेश देने लग जाते थे और बोल-कुबोल कह जाते थे। वे गुरमत के महान नियमों- *माइआ विच उदासी* और गुरु आदेशों

को श्रद्धा सहित मानने की कसौटी पर खरे नहीं थे उतरते।

गुरु रामदास जी ने अपने सपुत्रों और अन्य निकटवर्ती गुरसिखों के बारे में दीर्घ विचार करने के उपरांत (गुरु) अर्जुन देव जी को उत्तराधिकारी नियुक्त करने का निर्णय कर लिया और एक दिन भरे दीवान में (गुरु) अर्जुन देव जी को गुरगद्दी सौंप दी। उनके सम्मुख स्वयं माथा टेका और बाणी की पोथी भी भेंट कर दी। बाद में सारी संगत ने गुरु अर्जुन देव जी को माथा टेका। यह घटना भाद्रव संवत 1638 (अगस्त सन 1581) की है। उस समय गुरु अर्जुन साहिब की आयु लगभग 18½ वर्ष की थी।

ज्योति में विलीन होना

श्री गुरु अर्जुन देव जी को गुरु पद प्रदान करने के पश्चात श्री गुरु रामदास जी गोइंदवाल चले गए। साथ में गुरु अर्जुन देव जी को भी ले गए। कुछ दिन गोइंदवाल टिकने के पश्चात आप पहली सितंबर सन 1581 (तदनुसार 2 असू संवत 1638) को ज्योति में विलीन हो गए। चंद्र के हिसाब से उस दिन भाद्रव सुदी 3 थी। उस समय आपकी कुल आयु केवल 47 वर्ष की ही थी।

***

(9) श्री गुरु रामदास जी की बाणी

सन 1574 से 1581 तक गुरिआई के 7 वर्षों में श्री गुरु रामदास जी ने विषय वस्तु और आकार के पक्ष से अनंत बाणी की रचना की है। आपकी बाणी में काव्य रूप की बहुलता व विभिन्नता है, कविता व राग का सुमेल है जो उच्च आध्यात्मिक मंडलों को प्रकट करता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के बीच आने वाले 31 रागों में से आप ने 30 रागों में बाणी रची है। आखिरी राग जैजावंती है जिस में केवल श्री गुरु तेग बहादुर जी ने ही बाणी रची है। गुरु नानक देव जी ने 19 रागों में बाणी की रचना की थी। गुरु रामदास जी ने इन 19 रागों के अतिरिक्त और 11 रागों में बाणी की रचना की। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज कुल 22 वारां में से 8 वारां गुरु रामदास जी की हैं।

प्रिंसीपल कुलदीप सिंघ (हउरा) ने गुरु जी की बाणी के बारे में बहुत भावपूर्ण विचार प्रकट किये हैं। आप लिखते हैं :

''उनकी संपूर्ण रचना केवल सहज स्वाद ही नहीं देती, बल्कि जीवन के गहन मर्म को समझाती है। उन की रचना स्वत: बहते शीतल चश्मे की भाँति है जिसका मनन व अध्ययन, मन के अंदर शीतलता प्रदान करता है, अमृत बरसाता है, शांति प्रदान करता है। उन की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का एक महान व काफी बड़ा हिस्सा है और वह स्तर, रूप व बनावट के दृष्टिकोण से भी महान है। बिछोड़ा, वैराग्य व प्रीतम को मिलने की उत्कंठा, आपकी बाणी के मुख्य विषय हैं'' *नीर वहै वहि चलै जीउ, अंमृत भिंने लोइणा, मेरा मनु तनु विधा, अणीआले अणीआ राम राजे, गुरमुख रंग चलूलिआ, जनु नानकु मुसकि झकोलिआ, गुर अंमृत भिंनी देहुरी, अंमृतु बुरके राम राजे, मै चिरी विछुंने राम राजे, हरि सजणु लधा राम राजे* आदि बोलों में अगम्य रस व स्वाद है। आपने अपार कोमलता, सूक्ष्मता व सुंदरता से राग व कविता का सुमेल किया है। आप की संपूर्ण बाणी आप के जीवन की भाँति ही ईश्वरीय प्रीति में

रमी हुई है। गुरु-मिलाप हेतु कितनी प्रबल इच्छा व विहवलता है !

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा
हउ तिसु पहि आप वेचाई।।१।। (पृ ७५७)

(गुरमति प्रकाश, अगस्त 1982, पृ 27-28)

एक और स्थान पर **प्रिंसीपल कुलदीप सिंघ** जी लिखते हैं :

"गुरु रामदास जी की बाणी पढ़ते समय, ऐसा प्रतीत होता है जैसे वे अपने प्यारे को सामने बिठा कर, उस के संग प्यार की बातें कर रहे हों। उसके वचन सुन रहे हों, उस से बलि-बलि जा रहे हों। यही प्रतीत होता है कि जैसे गुरु रामदास जी अपने सतगुरु के सदा निकट बसते हों, हर समय उसके वचन सुनते हों व उस से कुर्बान हो रहे हों। इतने सरल शब्दों में इतना तीक्ष्ण प्रभाव पैदा कर पाना भी, उन के ही हिस्से आया है। जैसे :

(1) अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी,
सुणि गुर बचन मनि तीर लगईआ ।। (पृ ८३५)

(2) अदृसट अगोचरु पकड़िआ गुरसबदी,
हउ सतिगुर कै बलिहारीऐ।। (पृ १११४)

(3) जो बोले पूरा सतिगुरु सो परमेसरि सुणिआ।।
सोई वरतिआ जगत महि, घटि घटि मुखि भणिआ।। (पृ ८५४)

(4) राम, हम सतिगुर पारब्रहम करि माने।
हम मूढ़ मुगध असुध मति होते,
गुर सतिगुर के बचनि हरि हम जाने।।१।।रहाउ।।(पृ १६९)"

(गुरमति प्रकाश, अक्तूबर 1982, पृ 76)

बाणी का विवरण

प्रोफैसर साहिब सिंघ जी ने अपनी पुस्तक *जीवन वृतांत श्री गुरु राम दास जी* (पंजाबी) के पृष्ठ 32 से 35 तक गुरु रामदास जी द्वारा रची बाणी का विवरण दिया है, जो इस प्रकार है :

(क) गुरु नानक देव जी द्वारा प्रयुक्त राग :

सिरी राग, माझ, गउड़ी, आसा, गूजरी, वडहंस, सोरठि, धनासरी, तिलंग, सूही, बिलावल, रामकली, मारू, तुखारी, भैरउ, बसंत, सारंग, मलार और प्रभाती।

(ख) गुरु रामदास जी द्वारा स्वयं प्रयोग किए गए 11 रागों का विवरण :

देवगंधारी, बिहागड़ा, जैतसरी, टोडी, बैराड़ी, गौंड, नट नारायण, मालीगउड़ा, केदारा, कानड़ा और कल्याण।

यहां पर यह बात याद रखने वाली है कि गुरु ग्रंथ साहिब में भक्तों की बाणी भी दर्ज है जो गुरु नानक साहिब ने उदासियों यानी प्रचारक दौरों के समय एकत्र की थी। वह भी रागों के अनुसार है। भक्तों द्वारा प्रयोग किये गए रागों को निकाल कर, 5 राग ऐसे हैं जो केवल गुरु रामदास जी ने ही प्रयोग किये हैं, और किसी ने प्रयोग नहीं किये।

जहां तक रागों का संबंध है, सिख नीचे लिखे पांच रागों के लिए गुरु रामदास जी के सदा ऋणी रहेंगे।

देवगंधारी, बिहागड़ा, बैराड़ी, नट नारायण और कल्याण।

गुरु रामदास जी की 30 रागों में लिखी बाणी का विवरण इस प्रकार है :

शबद	246
अष्टपदियां	33
छंत	28

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 22 *वारां* हैं। इन में से नीचे अंकित रागों में गुरु रामदास जी की 8 *वारां* हैं :

सिरी राग, गउड़ी, बिहागड़ा, वडहंस, सोरठि, बिलावल, सारंग, कानड़ा।

पहले गुरु व्यक्तियों की भांति शबद, अष्टपदियां और छंदों के अतिरिक्त गुरु रामदास जी ने भी नीचे अंकित विशेष बाणियों की रचना की है:

(1)	सिरी राग में	पहरे, 1 शबद वणजारा, 1 शबद
(2)	गउड़ी में	करहले, 2 शबद
(3)	वडहंस में	घोड़ीयां, 2 शबद
(4)	मारू में	सोहले, 2 शबद

गुरु रामदास जी द्वारा रचित 8 वारां की 183 पउड़ियां है जिनका विवरण इस प्रकार है :

सिरी राग - 21	गउड़ी - 28
बिहागड़ा - 21	वडहंस - 21
सोरठि - 29	बिलावल - 13
सारंग - 35	कानड़ा - 15
	जोड़ - 183

प्रत्येक गुरु व्यक्ति ने बहुत से श्लोक भी लिखे हैं। गुरु अर्जुन देव जी ने वे श्लोक वारां की पउड़ियों के साथ दर्ज कर दिए। प्रत्येक पउड़ी के साथ, कम से कम 2 श्लोक दर्ज हैं। गुरु रामदास जी के इन श्लोकों का जोड़ 105 है। जो श्लोक वारां की पउड़ियों के संग दर्ज होने से रह गए, वे गुरु ग्रंथ साहिब के अंत पर दर्ज हैं। गुरु रामदास जी के वे श्लोक 30 हैं। इन्हें मिला कर सारे श्लोक 135 हैं।

गुरु रामदास जी की सारी बाणी का विवरण इस प्रकार हुआ:

शबद	246	अष्टपदियां	33
छंत	28	वारां की पउड़ियां	183
सलोक	135	पहरे	1 शबद
वणजारा	1 शबद	करहले	2 शबद
घोड़ीयां	2 शबद	सोलहे	2 शबद

रागों के अनुसार शबदों, अष्टपदियों व छंदों का विवरण

	राग	शबद	अष्टपदियां	छंत
(1)	सिरी राग	6	–	1
(2)	माझ	7	1	–
(3)	गउड़ी	32	–	–
(4)	आसा	16 (1+15)	–	14
(5)	गूजरी	7	1	–
(6)	देव गंधारी	6	–	–
(7)	बिहागड़ा	6	–	–
(8)	वडहंस	3	4	4
(9)	सोरठि	9	7	–
(10)	धनासरी	13	–	1
(11)	जैतसरी	11	–	–
(12)	टोडी	1	–	–
(13)	बैराड़ी	6	–	–
(14)	तिलंग	2	–	–
(15)	सूही	15	2	6
(16)	बिलावल	7	6	2
(17)	गौंड	6	–	–
(18)	रामकली	6	–	–
(19)	नट नारायण	9	6	–
(20)	माली गउड़ा	6	–	–

(21)	मारू	8	–	–
(22)	तुखारी	–	–	4
(23)	केदारा	2	–	–
(24)	भैरउ	7	–	–
(25)	बसंत	7	1	–
(26)	सारंग	13	–	–
(27)	मलार	9	–	–
(28)	कानड़ा	12	6	–
(29)	कल्याण	7	6	–
(30)	प्रभाती	7	–	–
	जोड़	246	33	32

***

(10) गुरु रामदास जी की बाणी में निहित प्रमुख गुरमति सिद्धांत

श्री गुरु रामदास जी की बाणी वृहत-आकार की होने के कारण, इसमें लगभग सारे प्रमुख गुरमति सिद्धांत समाहित हैं। पर प्रभु-प्रेम व गुरु के संग प्यार, आपकी बाणी के प्रधान विषय हैं। इसके साथ ही वैराग्य, बिछोड़े का अहसास और प्रभु व गुरु को मिलने की उत्कंठा भी आप की बाणी में से उमड़ती है।

आपकी बाणी में आए प्रमुख गुरमति-सिद्धांत कुछ इस प्रकार हैं :

(क) प्रभु की विशालता :

प्रभु कोई काल्पनिक शक्ति नहीं। बल्कि अमर अस्तित्व वाला व सर्वशक्तिमान है। प्रभु सब का आदि है। प्रभु मानव के मन की पकड़ में नहीं आ सकता। प्रभु अगम्य है और ज्ञानेंद्रियों का विषय नहीं है। वह आकार रहित, निरंकार है। माया के प्रभाव से दूर (निरंजन) है। उसकी उच्च अवस्था का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। प्रभु अपरंपार है - उसका पारावार नहीं पाया जा सकता। वह अनंत है, अदृष्ट है और शरीर रहित है। उसकी कोई जाति नहीं, वर्ण नहीं। वह इतना महान है कि उसके बराबर का (शरीक) कोई नहीं है। उसकी महानता के बारे में गुरु की कृपा द्वारा ही विचार की जा सकती है। सतगुरु जी कहते हैं :

वडा मेरा गोविंदु अगम अगोचरु, आदि निरंजनु निरंकारु जीउ।।
ता की गति कही न जाई, अमिति वडिआई,
मेरा गोविंदु अलख अपार जीउ।।
गोविंदु अलख अपारु अपरंपरु, आपु आपणा जाणै।।
किआ इह जंत विचारे कहीअहि, जो तुधु आखि वखाणै।।
जिस नो नदरि करहि तूं अपणी, सो गुरमुखि करे वीचारु जीउ।।
वडा मेरा गोविंदु अगम अगोचरु, आदि निरंजनु निरंकारु जीउ।।१।।

(आसा महला ४ छंत, पृ ५४९)

तेरी वडिआई तूहै जाणदा, तुधु जेवडु अवरु न कोई।।
तुधु जेवडु होरु सरीकु होवै ता आखीऔ, तुधु जेवडु तूहै होई।।
(बिहागड़े की वार महला ४, पृ ५४९)

(ख) प्रभु, प्राकृति में व्याप्त है :

सारी सृष्टि को प्रभु ने स्वयं पैदा किया है और इसे काम-धंधों में लगा दिया है। प्रभु सदा अमर व सच्चा है और हर स्थान पर मौजूद है।

सभ आपे तुधु उपाइ कै, आपि कारै लाई।।
तूं आपे वेखि विगसदा, आपणी वडिआई।।
हरि, तुधहु बाहरि किछु नाही, तूं सचा साई।।
तूं आपे आपि वरतदा, सभनी ही थाई।।
हरि तिसै धिआवहु संत जनहु, जो लए छडाई।।२।।
(सिरी राग की वार, महला ४, पृ ८३)

(ग) प्रभु का आसरा :

गुरु जी, प्रभु के आसरे को सर्वोत्तम मानते हैं और मन की चतुराई व धन के अहंकार की निंदा करते हैं :

किस ही जोरु अहंकार बोलण का।।
किस ही जोरु दीबान माइआ का।।
मै हरि बिनु टेक धर अवर न काई,
तू करते, राखु मै निमाणी हे।।१३।।
निमाणे माणु करहि तुधु भावै।।
होर केती झखि झखि आवै जावै।।
जिनका पखु करहि तू सुआमी,
तिनकी ऊपरि गल तुधु आणी हे।।१४।।
(मारू सोहले महला ४, पृ १०७१)

(घ) प्रभु की प्रीत :

गुरु रामदास जी के हृदय में प्रभु के लिए अगम्य प्यार है और उसके दर्शनों के लिए तीव्र इच्छा है। वे प्रभु से एक पल की दूरी भी नहीं सहार सकते। हर समय प्रभु के दर्शनों को लालायित रहते हैं। आप कहते हैं :

–कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा,
हउ तिसु पहि आपु वेचाई।।१।।

(सूही असटपदीआं महला ४, पृ ७५७)

–हरि दरसन कउ मेरा मनु बहु तपतै,
जिउ त्रिखावंतु बिनु नीर।।१।।
मेरै मनि प्रेमु लगो हरि तीर।।
हमरी बेदन हरि प्रभु जानै, मेरे मन अंतर की पीर।।१।।रहाउ।।

(गौंड महला ४, पृ ८६१)

–मेरे साहा, मै हरि दरसन सुखु होए।।
हमरी बेदनि तू जानता साहा,
अवरु किआ जानै कोइ।।रहाउ।।

(धनासरी महला ४, पृ ६७०)

–हरि बिनु रहि न सकउ इक राती।।
जिउ बिनु अमलै अमली मरि जाई है,
तिउ हरि बिनु हम मरि जाती।।रहाउ।।

(धनासरी महला ४, पृ ६६८)

–जिउ मछुली विणु पाणीऐ, रहै न कितै उपाइ।।
तिउ हरि बिनु संतु न जीवई,
बिनु हरि नामै मरि जाइ।।

(सही महला ४, अष्टपदियां पृ ७५९)

हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ।।
कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ।।
हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा,
मै नीरु वहे वहि चलै जीउ।।३।।

(माझ महला ४, पृ ९४)

प्रभु के वास्ते ऐसा प्यार, प्रभु दर्शनों के लिए ऐसी तीव्र उत्कंठा और प्रभु से बिछुड़ने का ऐसा अहसास, हर सिख के मन में होना जरूरी है।

(ड़) प्रभु का भाणा (ईश्वरेच्छा):

प्रभु के सेवक प्रभु के भाणे में रहते हैं। दुख और सुख दोनों अवस्थाओं को प्रभु द्वारा प्रदत्त निधि समझते हैं। मन की मति और अहं को त्याग कर प्रभु के दर पर गिर जाते हैं और सेवा का जीवन गुजारते हैं। भाणे में रह कर प्रभु के संग जुड़े रहने को वे अपने जीवन का मनोरथ समझते हैं। इस बारे में सतगुरु जी अपनी अगवाई इस प्रकार देते हैं :

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई।।२।।
जे भुख देहि त इत ही राजा, दुखु विचि सूख मनाई।।३।।
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी, विचि अगनी आपु जलाई।।४।।
पखा फेरी पाणी ढोवा,जो देवहि सो खाई।।५।।
नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै, हरि मेलि लैहु वडिआई।।६।।

(राग सूही असटपदीआ महला ४, पृ ७५७)

(च) नाम सुमिरन के द्वारा प्रभु की प्राप्ति :

सच्चे सतगुरु की शरण में आ कर, प्रभु का स्तुति-गायन (नाम सुमिरन) करने से ही प्रभु की प्राप्ति हो सकती है। प्रभु को मिलने का यह ही एकाएक रास्ता है।

– **सो हरि हरि नामु सदा सदा समाले,**
जिसु सतगुरु पूरा मेरा मिलिआ।
नानक हरि जन हरि इके होए,
हरि जपि हरि सेती रलिआ।।६।।१।।३।।

(वड़हंस महला ४, पृ ५६२)

– गुर सबदी हरि पाईऐ, हरि पारि लघाइ।।
मनहठि किनै न पइओ, पुछहु वेदा जाइ।।
नानक हरि की सेवा सो करे, जिसु लए हरि लाइ।।१०।।

(सिरी राग की वार महला ४, पृ ८६)

–जह हरि सिमरनु भइआ, तह उपाधि गतु कीनी,
वडभागी हरि जपना।।
जन नानक कउ गुरि इह मति दीनी,
जपि हरि भवजलु तरना।।२।।६।।१२।।

(धनासरी महला ४, पृ.६७०)

हरि नाम का जाप करने में ढील नहीं करनी चाहिए, क्योंकि मृत्यु कब आ जाए, इसका कोई पता नहीं । यथा :

हरि जपदिआ खिनु ढिल न कीजई मेरी जिंदुड़ीए,
मतु कि जापै साहु आवै कि न आवै राम।
सा वेला, सो मूरति, सा घड़ी,
सो मुहतु सफलु है मेरी जिंदुड़ीए,
जितु हरि मेरा चिति आवै राम।।
जन नानक नामु धिआइआ मेरी जिंदुड़ीए,
जमकंकरु नेड़ि न आवै राम।।

(बिहागड़ा महला ४, पृ ५४०)

नाम सुमिरन का यत्न तो ही सफल हो सकता है यदि मन निर्मल और निष्कपट हो। कई कपटी मनुष्य केवल दिखलावे के लिए नाम का सुमिरन अथवा भक्ति करते हैं। इन के छल फरेब का भेद, एक दिन खुल जाता है और संसार में निरादरी होती है। यथा :

–जिस नो परतीति होवै, तिसका गाविआ थाइ पवै,
सो पावै दरगह मानु।।
जो बिनु परतीती कपटी कूड़ी कूड़ी अखी मीटदे,
उन का उतरि जाइगा झूठु गुमानु।।३।।

(सूही महला ४, पृ ७३४)

–कोई गावै रागी नादी बदी बहु भाति करि,
नही हरि हरि भीजै राम राजे।।
जिना अंतरि कपटु विकारु है, तिना रोइ किआ कीजै।।

हरि करता सभु किछु जाणदा, सिरि रोग हथु दीजै।।
जिना नानक गुरमुखि हिरदा सुधु है, हरि भगति हरि लीजै।।४।।

(आसा महला ४, पृ ४५०)

(छ) हरि-रस अथवा नाम रस :

प्रभु के स्तुति-गायन द्वारा, मन को जो आनंद प्राप्त होता है, उसको नाम रस कहा गया है। जैसे आम दुनियांदार को सांसारिक पदार्थों के भोग से आनंद की प्राप्ति होती है, वैसे ही प्रभु के भक्त को प्रभु के गुण गायन करने से आनंद की प्राप्ति होती है। यह सच्चा अथवा अमर अनंद है। जिस को इस नाम रस अथवा हरिरस की प्राप्ति हो जाती है, उस मनुष्य के मन में सांसारिक पदार्थों का मोह कम हो जाता है और इन पदार्थों के रस, फीके लगने लग जाते हैं।

-जितने रस अनरस हम देखे,
सभ तितने फीक फीकाने।।
हरि का नामु अंमृत रसु चाखिआ,
मिलि सतिगुर, मीठ रस गाने।।२।।

(गउड़ी महला ४, पृ १६९-७०)

-मंदरि घरि आनंदु हरि हरि जसु मनि भावै।।
सभी रस मीठे मुखि लगहि, जा हरि गुण गावै।।

(गउड़ी बैरागणि, महला ४, पृ १६६)

-नित सउदा सूदु कीचै बहु भाति करि, माइआ कै ताई।
जा लाहा देइ ता सुखु मने, तोटै मरि जाई।।
जो गुण साझी गुर सिउ करे, नित नित सुखु पाई।।३।।
जितनी भूख अन रस साद है, तितनी भूख फिरि लागै।।
जिसु हरि आपि कृपा करे, सो वेचे सिरु गुर आगै।।
जन नानक हरि रसि त्रिपतिआ, फिरि भूख ना लागै।।४।।

(गउड़ी बैरागणि महला ४, पृ १६६-६७)

(ज) भेख-पाखंड और कर्म-कांड :

नाम सुमिरन को छोड़ कर अन्य जितने कर्म कांड हैं, सभी फोकट

कर्म हैं। तीर्थ यात्रा, व्रत, सुच संजम, मूर्ति पूजा, देवी देवताओं की पूजा, भेख धारण करने और ब्राहमणों, योगियों, जैनियों आदि द्वारा मुक्ति के लिए प्रचारित किए जा रहे तथाकथित धार्मिक कर्म व साधन आदि निरर्थक कर्म हैं :

–गंगा जमुना गोदावरी सरसुती
ते करहि उदमु धूरि साधू की ताई।।
किलविख मैलु भरे परे हमरै विचि,
हमरी मैलु साधू की धूरि गवाई।।१।।

(मलार महला ४, पृ १२६३)

–मनमुखि हुकमु न बुझै बपुड़ी, नित हउमै करम कमाइ।।
वरत नेमु सुच संजमु पूजा पाखंडि भरमु न जाइ।।

(सलोक वारां ते वधीक, सलोक महला ४, पृ १४२३)

–भरमि भूले अगिआनी अंधुले, भ्रमि भ्रमि फूल तोरावै।।
निरजीउ पूजहि, मड़ा सरेवहि, सभ बिरथी घाल गवावै।।३।।

(राग मलार, पृ १२६४)

–ब्रहमा, बिसन, महादेउ त्रै गुण रोगी,
विचि हउमै कार कमाई।।

(राग सूही महला ४, पृ ७३५)

–खट करम किरिआ करि बहु बहु बिसथार,
सिध साधिक जोगीआ करि जट जटा जट जाट।।
करि भेख न पाईऐ हरि ब्रहम जोगु
हरि पाईऐ सतसंगती,
उपदेसि गुरु गुर संत जना, खोलि खोलि कपाट।।१।।

(कानड़ा महला ४, पृ १२९७)

– पंडितु सासत सिम्रित पढ़िआ।।
जोगी गोरखु गोरखु करिआ।।
मै मूरख हरि हरि जपु पढ़िआ।।१।।
ना जाना किआ गति राम हमारी।।
हरि भजु मन मेरे तरु भउजलु तू तारी।।१।।रहाउ।।

संनिआसी बिभूत लाइ देह सवारी।।
पर त्रिआ तिआगु करी ब्रहमचारी।।
खत्री करम करे सूरतणु पावै।।
सूद वैसु पर किरति कमावै।
मै मूरख हरि नाम छडावै।।३।।
सभ तेरी स्रिसटि तूं आपि रहिआ समाई।।
गुरमुखि नानक दे वडिआई।।
मै अंधुले हरि टेक टिकाई।।४।।

(गउड़ी गुआरेरी महला ४, पृ १६३-६४)

(झ) **गुरु का मार्गदर्शन व उसके प्रति प्यार :**

सतगुरु के मार्गदर्शन में ही जीवन सफल हो सकता है क्योंकि सतगुरु जीवन के सत्य से जुड़ा होता है। सतगुरु ने प्रभु भक्ति द्वारा प्रभु में लीनता प्राप्त कर ली होती है। उसके अंदर, ब्रहम विचार टिक जाता है। वह ब्रहम ज्ञान को सृष्टि में बांटता है और सृष्टि का उद्धार करता है। अनंत प्रभु के सुमिरन के द्वारा वह स्वयं अनंत हो जाता है, संसार में कोई भी उसकी बराबरी नहीं कर सकता। सतगुरु सिख को माया के प्रभाव से बचाता है और सिख को काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों को वश में करने के योग्य बनता है। सतगुरु की शरण में आने से तृष्णाएं समाप्त हो जाती हैं, विकारों की तपिश समाप्त हो जाती है और मन शीतल हो जाता है - मन का भटकाव बंद हो जाता है और आत्मिक सुख और शांति प्राप्त होती है। सतगुरु निरवैर है, उस के लिए स्तुति व निंदा एक समान हैं। केवल उसी से ही नाम की प्राप्ति हो सकती है। गुणों के कारण सतगुरु और वाहिगुरु में कोई भेद नहीं है। ऐसे विचारों को गुरबाणी में गुरु रामदास जी इस प्रकार प्रकट करते हैं :

-जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु, सो सतिगुरु कहीऐ।।
मन की दुबिधा बिनसि जाइ, हरि परम पदु लहीऐ।।१।।

(गउड़ी बैरागणि महला ४, पृ १६८)

-सचु सचा सभ दू वडा है, सो लए जिसु सतिगुरु टिके।।
सो सतिगुरु जि सचु धिआइदा, सचु सचा सतिगुरु इके।।

सोई सतिगुरु पुरखु है, जिनि पंजे दूत कीते वसि छिके।।

(गउड़ी की वार, महला ४, पृ 304)

–तिसु मिलीऐ सतिगुर सजणै, जिस अंतरि हरि गुणकारी।।
तिसु मिलीऐ सतिगुर प्रीतमै, जिनि हंउमै विचहु मारी।।
सो सतिगुर, पूरा धनु धंनु है, जिनि हरि उपदेसु दे सभ सृस्टि सवारी।।

(वडहंस की वार, महला 4, पृ 586)

–सतिगुरु पुरखु अगंमु है, जिसु अंदरि हरि उरि धारिआ।।
सतिगुरु नो अपड़ि कोइ न सकई, जिसु वलि सिरजणहारिआ।।
सतिगुरू का खड़गु संजोउ हरि भगति है, जितु कालु कंटकु मारि विडारिआ।।
सतिगुरू का रखणहारा हरि आपि है, सतिगुरू कै पिछै हरि सभि उबारिआ।।
जो मंदा चितवै पूरे सतिगुरू का, सो आपि उपावणहारै मारिआ।।
एह गल होवै हरि दरगह सचे की, जन नानक अगमु वीचारिआ।।२।।

(गउड़ी की वार, महला ४, पृ ३१२)

–वाहु वाहु सतिगुरु पुरखु है, जिनि सचु जाता सोइ।।
जितु मिलिऐ तिख उतरै, तनु मनु सीतलु होइ।
वाहु वाहु सतिगुरु सति पुरखु है, जिस नो समतु सभ कोइ।।
वाहु वाहु सतिगुरु निरवैरु है, जिसु निंदा उसतति तुलि होइ।।
वाहु वाहु सतिगुरु सुजाणु है, जिस अंतरि ब्रहमु वीचारु।।
वाहु वाहु सतिगुरु निरंकारु है, जिसु अंतु न पारावारु।।
वाहु वाहु सतिगुरू है, जि सचु दृढ़ाए सोइ।।
नानक सतिगुर वाहु वाहु, जिसु ते नामु परापति होइ।।२।।

(सलोक वारां ते वधीक, महला ४, पृ १४२१)

–गुर गोविंदु, गोविंदु गुरू है, नानक भेद न भाई।।४।।१।।८।।

(राग आसा छंत महला ४, पृ ४४२)

ऐसे सर्वकला समरथ गुरु के लिए, गुरु रामदास जी के मन में अगम्य प्यार व श्रद्धा भावना है। ऐसे गुरु के दर्शन प्राप्त करने के लिए मन में तड़प है, गुरु-दर्शन से बलिहार जाते हैं और गुरु दर्शन द्वारा आत्मिक आनंद की सीमा पर पहुंच जाते हैं। अपनी भावनाओं को वे इस प्रकार प्रकट करते हैं :

–सतिगुरु सागरु गुण नाम का, मै तिसु देखणु का चाउ।।
हउ तिसु बिनु घड़ी न जीवऊ, बिनु देखे मरि जाउ।
(सूही महला ४, अष्टपदियां, पृ ७५९)

–झखड़ु झागी मीहु वरसै, भी गुरु देखण जाई।।१३।।
समुंद सागरु होवै बहु खारा, गुरसिखु लंघि गुर पहि जाई।।१५।।
जउ प्राणी जल बिनु है मरता, तिउ सिखु गुर बिनु मरि जाई।।१५।।
जिउ धरती सोभ करे, जलु बरसै, तिउ सिखु गुर मिलि बिगसाई।।१६।।
(राग सूही असटपदीआं, पृ ७५७)

–जे गुरु झिड़के त मीठा लागै, जे बखसे त गुर वडिआई।।२५।।
(राग सूही महला ४, असटपदीआं पृ ७५८)

–गुर सुंदरु मोहनु पाइ करे, हरि प्रेम बाणी मनु मारिआ।।
मेरै हिरदै सुधि बुधि विसरि गई, मन आसा चिंत विसारिआ।।
मैं अंतरि वेदन प्रेम की, गुर देखत मनु साधारिआ।।
वडभागी प्रभ आए मिलु, जनु नानकु खिनु खिनु वारिआ।।४।।१।।५।।
(सूही महला ४, पृ ७७६)

–राम, गुरि मोहनि मोहि मनु लईआ।।
हउ आकल बिकल भई गुर देखे,
हउ लोट पोट होइ पईआ।रहाउ।।
(बिलावल महला ४, पृ ८३६)

(ञ) गुरबाणी अथवा शबद गुरु है :

प्रभु के संग अभेदता प्राप्त करने के पश्चात प्राप्त हुए ज्ञान को गुरु, बाणी के द्वारा प्रकट करता है। इस बाणी को शबद भी कहा गया है। सिख धर्म में बाणी अथवा शबद को ही गुरु स्वीकार किया गया है। यह सिखी का एक विशेष व विलक्षण सिद्धांत है। गुरु रामदास जी ने इस सिद्धांत पर विशेष बल दिया है। आप कहते हैं कि जो मनुष्य गुरबाणी को हृदय में धारण करते हैं और गुर उपदेशों के निर्देशन में जीवन व्यतीत करते हैं, उन को गुरु यकीनी तौर पर संसार समुद्र से पार करवा देता है। शबद गुरबाणी से प्यार करने से मन

निर्मल हो जाता है, विकारों से मुक्ति प्राप्त हो जाती है, प्रभु के संग प्यार पैदा होता है। गुरबाणी में अटल आत्मिक जीवन देने वाला नाम-अमृत है और शबद की अगवाई में चलकर इन आंखों द्वारा न दिखलाई देने वाले प्रभु का अनुभव हो जाता है। प्रभु की प्रेरणा द्वारा ही गुरु, बाणी उचारता है :

-बाणी गुरू, गुरू है बाणी, विचि बाणी अमृतु सारे।।
गुरु बाणी कहै, सेवकु जनु मानै, परतखि गुरू निसतारे।।४।।

(नट अष्टपदीआं महला ४, पृ ९८२)

-सतिगुर बचन, बचन है सतिगुर, पाधरु मुकति जनावैगो।।५।।

(राग कानड़ा अष्टपदियां, पृ १३१०)

-अंतरि अगनि सबल अति बिखिआ, हिव सीतलु सबदु गुर दीजै।।
तनि मनि सांति होइ अधिकाई, रोगु काटै सूखि सवीजै।।३।।

(कलिआन महला ४, पृ १३२६)

-अमृत बाणी ततु है, गुरमुखि वसै मनि आइ।।
हिरदै कमलु परगासिआ, जोती जोति मिलाइ।।

(सलोक वारां ते वधीक महला ४, पृ १४२४)

अद्रिसटु अगोचरु पकड़िआ गुर शबदी हउ सतिगुर कै बलिहारीऐ।।

(तुखारी छंत महला ४, पृ १११४)

-सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु,
हरि करता आपि मुहहु कढाए।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०८)

कई नकली गुरु भी सच्चे गुरु की नकल उतार कर कविताएं लिखते हैं और उनको गुरबाणी कह कर प्रचारित करते हैं। इस प्रकार के मनुष्य झूठे हैं, उनके अंदर कपट है, पर बाहर से वे धर्मात्मा बनते हैं। वे केवल माया की खातिर ही छल कपट करते हैं।

सतिगुर की बाणी सति सरूपु है, गुरबाणी बणीऐ।।
सतिगुर की रीसै होरि कचु पिचु बोलदे,
से कूड़िआर कूड़े झड़ि पढ़ीऐ।।

ओना: अंदरि होरु मुखि होरु है,
बिखु माइआ नो झखि मरदे कड़ीऐ।।९।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०४)

(ट) सिख और उसके कर्तव्य :

जो मनुष्य गुरु द्वारा दर्शाए मार्ग पर चलता है, अथवा अपना जीवन गुरु के उपदेशों के अनुसार ढालता है, वही सिख है। सिख के मन में गुरु के लिए असीम प्रेम व श्रद्धा होना अत्यंत आवश्यक है। सच्चा सिख गुरु के चरण शरण में रहना ही पसंद करता है। वह प्रभु में पूर्ण विश्वास करता है। प्रभु को अंग-संग समझता है और नाम सुमिरन द्वारा प्रभु में अभेदता हासिल करता है।

ऐसे सिखों को गुरु अपने मित्रों, भाइयों, पुत्रों के तुल्य प्यार करता है। गुरसिखों की सेवा करने वालों पर गुरु की कृपा होती है।

गुरु के उपदेशों को दैनिक जीवन में ढालकर, गुरसिख इतनी उच्च अवस्था के मालिक बन जाते हैं कि उन में व गुरु में भेद (अंतर) नहीं रहता। ऐसे गुरसिखों में गुरु स्वयं विचरण करता है।

-गुरसिख मीत चलहु गुर चाली।।१।।रहाउ।।
जो गुरु कहै सोई भल मानहु, हरि हरि कथा निराली।।१।।रहाउ।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ६६७)

उपदेसु जि दिता सतिगुरू, सो सुणिआ सिखी कंने।।
जिन सतिगुर का भाणा मंनिआ, तिन चढ़ी चवगणि वंने।।
इह चाल निराली गुरमुखी, गुर दीखिआ सुणि मनु भिंने।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३१४)

धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ, जो सतिगुर चरणी जाए पइआ।।
धंनु धंनु सो गुरसिख कहीऐ, जिनि हरि नामा मुखि रामु कहिआ।।
धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ, जिसु हरि नामि सुणिऐ मनि अनदु भइआ।।
धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ, जिनि सतिगुर सेवा करि हरि नामु लइआ।।
तिसु गुरसिख कंउ हंउ सदा नमसकारी, जो गुर कै भाणै गुरसिखु चलिआ।।

(वडहंस की वार, महला ४, पृ ५९३)

-ते गुर के सिख मेरे हरि प्रभि भाए,

जिना हरि प्रभु जानिओ मेरा नालि।।

(नट नाराइण महला ४, पृ ९७८)

–जिना गुरु पिआरा मनि चिति, तिना भाउ गुरू देवाईआ।।
गुर सिखा इको पिआरु, गुर मिता पुता भाईआ।।

(सोरठि की वार महला ४, पृ ६४८)

–गुरसिखां अंदरि सतिगुरू वरतै,
जो सिखां नो लोचै, से गुर खुसी आवै।।

(गउड़ी की वार महला ४ पृ ३१७)

–गुरू सिखु, सिखु गुरू है, ऐको गुर उपदेसु चलाए।।

(राग आसास, महला ४, पृ ४४४)

गुरु रामदास जी ने गुरसिख का नित्यक्रम भी निश्चित किया हुआ है। आपका कथन है कि गुरसिख अमृतबेला में उठकर, स्नान करके प्रभु के सुमिरन में जुड़ता है(नाम रूपी अमृत सरोवर में स्नान करता है, प्रभु का स्तुति गायन करता है जिस से आत्मा से पापों, विकारों व अवगुणों की मैल उतर जाती है। फिर गुरसिख साध संगत में जा कर कीर्तन करता व सुनता है। दिन के समय भी वह जीविकोपार्जन करते समय प्रभु की याद को मन में बसाए रखता है। हर समय प्रभु को याद रखने वाला सिख ही गुरु को अच्छा लगता है। अंत में आप उस गुरसिख की चरण धूड़ि की चाह करते हैं जो स्वयं प्रभु का स्तुति गायन करता है और दूसरों को ऐसा ही स्तुतिगायन करने की प्रेरणा करता है।

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए, सु भलके उठि हरि नामु धिआवै।।
उदमु करे भलके परभाती, इसनानु करे, अंमृत सरि नावै।।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै, सभि किलविख पाप दोख लहि जावै।।
फिरि चढ़ै दिवसु गुरबाणी गावै, बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै।।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरे, सो गुरसिखु गुरू मनि भावै।।
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी, तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै।।
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की,

जो आप जपै अवरह नामु जपावै।।२।।

(गउड़ी की वार, महला 4, पृ 305)

(ठ) मायाधारी मनुष्य :

जो मनुष्य प्रभु दाता को भूल कर, उसके द्वारा प्रदत्त भौतिक वस्तुओं से ही प्यार करते हैं और सारा जीवन धन, संपत्ति, उच्च पदवियां व राजसी शक्ति की प्राप्ति की खातिर यत्नशील रहते हैं, वे मायाधारी हैं। ये जीवन भर पाप करके माया एकत्र करते हैं और अंततः ख्वार होते हैं। ऐसे लोग माया की प्राप्ति की होड़ में व खाने पीने, हंसने खेलने व एशप्रस्ती में व्यस्त जीवन को बर्बाद कर लेते हैं।

प्रभु अकाल पुरख स्थाई तौर पर सर्वशक्तिवान है। पर धनवान के शक्तिवान, राज्य शक्ति की मद में अहंकारी मनुष्य चार दिनों के मेहमान हैं। माया का रंग कसुंभे के फूल की भांति कच्चा होता है। संसार से जाते समय माया मनुष्य का साथ नहीं देती - पक्के महल, धन-धान्य, संपत्ति, नाती-रिश्तेदार, सभी यहीं पर ही रह जाते हैं। पर माया प्राप्ति के लिए किये गये पापों का फल जरूर भुगतना पड़ता है। इसलिए केवल प्रभु से ही डरना चाहिए और उसी के संग प्रीति डालनी चाहिए। सतगुरु जी कहते हैं :

-जितने साह पातिसाह उमराव सिकदार चउधरी
सभि मिथिआ झूठु भाउ दूजा जाणु।।
हरि अबिनासी सदा थिरु निहचलु,
तिसु मेरे मन भजु परवाणु।।१।।
मेरे मन, नामु हरी भजु सदा दीबाणु।।
जो हरि महलु पावै गुर बचनी,
तिसु जेवडु अवरु नाही किसै दा ताणु।।१।।रहाउ।।
जितने धनवंत कुलवंत मिलखवंत दीसहि मन मेरे,
सभि बिनसि जाहि जिउ रंगु कसुंभ कचाणु।।
हरि सति निरंजनु सदा सेवि मन मेरे,
जितु हरि दरगह पावहि तू माणु।।२।।

(गौंड महला ४, पृ ८६१)

-खान मलूक कहाइदे, को रहणु न पाई।।
गढ़ मंदर गच गीरीआ, किछु साथि न जाई।।
सोइन साखति पउण वेग, धृगु धृगु चतुराई।।
छतीह अंमृत परकार करहि, बहु मैलु वधाई।।
नानक जो देवै तिसहि न जाणनीः, मनमुखि दुखु पाई।।२३।।

(सारंग की वार, महला ४ पृ १२४६)

-ऐह भूपति राणे रंग दिन चारि सुहावणा।।
एहु माइआ रंगु कसुंभ खिन महि लहि जावणा।।
चलदिआ नालि न चलै, सिरि पाप लै जावणा।।
जां पकड़ि चलाइआ कालि, तां खरा डरावणा।।
ओह वेला हथि न आवै, फिरि पछुतावणा।।६।।

(सोरठि की वार,महला ४ पृ ६४५)

-भूपति राजे रंग राइ, संचहि बिखु माइआ।।
करि करि हेतु वधाइदे, पर दरबु चुराइआ।।
पुत्र कलत्र न विसहहि, बहुत प्रीति लगाइआ।।
वेखदिआ ही माइआ धुहि गई, पछुतहि पछुताइआ।।
जम दरि बधे मारीअहि, नानक हरि भाइआ।।२१।।

(सारंग की वार महला ४, पृ १२४५)

(ड) माया (धन-धान्य) सफल करने का ढंग :

गुरमति धन, पदार्थ आदि के त्याग का उपदेश नहीं देती। गुरमति यह समझाती है कि मनुष्य ने माया का गुलाम नहीं बनना और माया को अपने नियंत्रण में रख कर इसका सही इस्तेमाल करना है। धन, संपत्ति आदि को ऐसे कार्यों के लिए प्रयोग करना है जिनसे प्रभु प्रसन्न हों। सतगुरु जी कहते हैं कि जो मनुष्य संसार रूपी माया में विचरण करते हुए प्रभु के साथ मन जोड़े रखते हैं, उनका खाया पिया सभ पवित्र है। गुरसिखों के महल, सराय, घर सभी पवित्र हैं जिन में गुरसिख व जरूरतमंद जा कर रहते हैं। गुरसिखों के घोड़े आदि (व अन्य सभी प्रकार के वाहन इत्यादि) सभी पवित्र हैं, जिन की सवारी गुरमुखजन

करते हैं :

–गुरमुखि सभ पवितु है, धनु संपै माइआ।।
हरि अरथि जो खरचदे, देदे सुखु पाइआ।।

(सारंग की वार, महला ४ पृ १२४६)

–तिना का खाधा, पैधा, माइआ, सभु पवितु है।।।
जो नामि हरि राते।।
तिन के घर मंदर महल सराई सभि पवितु हहि।।
जिनी गुरमुखि सेवक सिख अभिआगत जाइ वरसाते।।
तिनके तुरे जीन खुरगीर सभि पवितु हहि
जिनी गुरमुखि सिख साध संत चढ़ि जाते।।।

(रागु सोरठि वार महले ४ की पृ ६४८)

(ढ) निष्काम सेवा :

सिखी में सेवा का बहुत ऊंचा स्थान है। सिख को गुरद्वारे में सेवा का व्यवहारिक पाठ पढ़ाया जाता है। बाद में जा कर वह संसार का सेवक बन जाता है। सेवा वही भली है जो गुरु के आशय के अनुसार हो। ऐसी सेवा, अहंकार का त्याग करके और निर्माण हो कर ही की जा सकती है। इस से सेवक की आत्मा, पापों व विकारों से मुक्त हो जाती है :

–सा सेवा कीती सफल है, जितु सतिगुर का मनु मंने।।
जा सतिगुर का मनु मंनिआ, ता पाप कसंमल भंने।।।

(गउड़ी की वार, महला ४, पृ ३१४)

–विचि हउमै सेवा थाइ न पाए।।
जनमि मरै फिरि आवै जाए।।
सो तपु पूरा, साई सेवा, जो हरि मेरे मनि भाणी हे।।

(मारू सोलहे महला ४, पृ ३०४)

(ण) मुक्ति :

कई धर्म मुक्ति की बात करते हुए यह कहते हैं कि मरने के पश्चात मनुष्य को तथाकथित स्वर्ग की प्राप्ति हो जाय तो मनुष्य मुक्ति की प्राप्ति कर

लेता है। स्वर्ग में कई प्रकार के शारीरिक सुखों के लालच भी दिये गए हैं। गुरमति ऐसी मुक्ति अथवा स्वर्ग प्राप्ति में विश्वास नहीं करती है। गुरमति के अनुसार प्रभु में लीनता ही मुक्ति है। इस संसार में रहते हुए पापों, विकारों व माया के प्रभाव से बचे रहना और प्रभु की याद में मन को जोड़े रखना ही मुक्ति है। यह मुक्ति, प्रभु के स्तुति-गायन से प्राप्त होती है।

–सुरग मुकति बैकुंठ सभ बांछहि,
निति आसा आस करीजै।।
हरि दरसन के जन मुकति न मांगहि,
मिलि दरसन त्रिपति मनु धीजै।।१।।
माइआ मोहु सबलु है भारी,
मोहु कालरव दाग लगीजै।।
मेरे ठाकुर के जन अलिपत है मुकते,
जिउ मुरगाई पंकु न भीजै।।२।।

(कलिआन महला ४, पृ १३२४)

–से मुकतु से मुकतु भए, जिनः हरि धिआइआ जीउ,
तिन टूटी जम की फासी।।

(आसा महला ४, पृ ३४८)

(त) **रिश्तेदार :**

गुरु पातशाह कहते हैं कि संसार में माता, पिता, पुत्र आदि रिश्ते पूर्व जन्मों के संयोगों के कारण होते हैं। प्रभु स्वयं ही ये रिश्ते स्थापित करता है। पर यह भी एक सत्य है कि भाई, मित्र और अन्य रिश्तेदार अपने स्वार्थ के कारण ही मनुष्य के साथ प्यार करते हैं(या प्यार का प्रदर्शन करते हैं)। जब स्वार्थ पूरा हो जाता है तो कोई भी समीप नहीं रहता है। सच्चा मित्र-सखा तो प्रभु स्वयं है, उसी का ही सुमिरन करना चाहिए। वही दुखों व सुखों में आत्मिक बल प्रदान करता है।

माई बाप पुत्र, सभि हरि के कीए।।
सभना कउ सनबंधु हरि करि दीए।।

(गूजरी महला ४, पृ ४९४)

–जो संसारै के कुटंब मित्र भाई बीसहि मन मेरे,
ते सभि अपनै सुआइ मिलासा।।
जितु दिनि उनः का सुआउ होइ न आवै,
तितु दिनि नेड़ै को न ढुकासा।।
मन मेरे, अपना हरि सेवि दिनु राती, .
जो तुधु उपकरै दूखि सुखासा।।३।।

(रागु गौंड चउपदे महला ४, पृ ८६०)

–जो दीसै माइआ मोह कुटंबु सभु,
मत तिस की आस लगि जनमु गवाई।।
इन्ह कै किछु हाथि नही, कहा करहि इहि बपुड़े,
इनः वाहिआ कछु न वसाई।।
मेरे मन, आस करि हरि प्रीतम अपुने की,
जो तुझु तारै, तेरा कुटंबु सभु छडाई।।२।।

(रागु गौंड चउपदे महला ४, पृ ८५९)

(थ) उपदेशक :

जो मनुष्य उपदेश अथवा धर्म प्रचार का काम करते हैं, वे धन्य हैं। गुरु पातशाह कहते हैं कि मैं ऐसे लोगों की चरण धूड़ि पाने को लालायित हूं। पर साथ ही प्रताड़ित करते हुए यह भी कहते हैं कि लोगों को प्रभु के साथ वही जोड़ सकता है जिस ने अपने अंतःकरण में बसने वाले प्रभु के संग पहचान बना ली है और जो सदा अटल रहने वाले प्रभु के नाम का जाप करता है।

–ओइ पुरख प्राणी धंनि जन हहि,
उपदेसु करहि परउपकारिआ।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३११)

–जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०६)

-जिस दै अंदरि सचु है, से सचा नामु मुखि सचु अलाए।।
ओहु हरि मारगि आपि चलदा, होरना नो हरि मारगि पाए।।

(वार माझ की, महला ४, पृ १४०)

(द) नम्रता व बढ़प्पन :

एक अनाथ बालक की स्थिति से, सिख संगत के दिलों के पातशाह बने, श्री गुरु रामदास जी नम्रता और बढ़प्पन की मुंह बोलती तस्वीर थे। सांसारिक और आध्यात्मिक सत्ता प्राप्त कर लेने के पश्चात भी वे अपने आप को पापी, गुणहीन, अपराधी आदि शब्दों से संबोधित करते हैं और प्रभु से कृपा दृष्टि की मांग करते हैं। वास्तव में ऐसा कहते हुए आप सिखों के लिए मार्ग चिन्ह स्थापित करते हैं :

मेरे राम, हम पापी सरणि परे हरि दुआरि।।
मतु निरगुण, हम मैले, कबहूं अपुनी किरपा धारि।।१।।रहाउ।।
हमरे अवगुण बहुतु बहुतु है, बहु बार बार हरि गणत न आवै।।
तूं गुणवंता हरि हरि दइआलु, हरि आपे बखसि लैहि हरि भावै।।
हम अपराधी राखे गुर संगती, उपदेसु दीओ हरि नामु छडावै।।२।।

(गउड़ी बैरागणि महला ४ पृ १६७)

***

(11) गुरु रामदास जी की बाणी में इतिहासिक घटनाएं

श्री गुरु रामदास जी ने अपनी बाणी में गुरु घर और सिख इतिहास से संबंधित कुछ एक इतिहासिक घटनाओं का वर्णन भी किया है। इनका उद्देश्य गुरमति सिद्धांतों को दृढ़ करवाना और गुरु के महत्व को प्रकट करना था। गुरु साहिब के इस प्रयास को ध्यान में रखते हुए ही **फारस्टर** ने अपने सफरनामों (ट्रैवल्ज़) में लिखा है कि गुरु रामदास जी ने इतिहासिक घटनाओं व पूर्वजों के उपदेशों व नियमों को एक स्थान पर संकलित किया और उनकी रचनाओं की व्याख्या करके उनके साथ संबद्ध किया।

गुरु पातशाह ने जिन घटनाओं का वर्णन किया है, वे इस प्रकार हैं:

(क) अभीच पर्व के समय गुरु अमरदास जी का प्रचारक दौरा

इस प्रचारक दौरे के बारे में इस पुस्तक में पहले भी वर्णन किया जा चुका है। गुरु रामदास जी ने इस दौरे का वर्णन तुखारी राग में उचारे गए एक शबद में किया है। आप कहते हैं कि जिस मनुष्य को गुरु सतिगुरु का दर्शन हो गया, उस के लिए यही तीर्थ स्नान है और अभीच नक्षत्र का पवित्र दिवस है। गुरु के दर्शन की कृपा द्वारा उस मनुष्य की खोटी मति की मैल कट जाती है और उसके अंदर आत्मिक जीवन के दृष्टिकोण से बेसमझी वाला अंधकार दूर हो जाता है। जिसने गुरु का दर्शन कर लिया है उसने मन में से अज्ञान का अंधकार दूर कर लिया है और उसके अंदर परमात्मा की ज्योति ने अपना प्रकाश कर दिया है। उस मनुष्य के जन्म से मरने तक के, सारे दुख दूर हो जाते हैं और वह अविनाशी प्रभु को पा लेता है। गुरु (अमरदास जी) अभीच पर्व के तीर्थ स्नान के समय कुलखेत (कुरुक्षेत्र) गए। अभीच पर्व के अवसर

पर गुरु जी द्वारा स्वयं भ्रमण करने की घटना ने इस दिन को पवित्र बना दिया।

सारे रास्ते में परमात्मा की भक्ति का वातावरण व उद्यम बना रहा। बहुत से लोग दर्शनार्थ आए। जिन भाग्यवान पुरुषों ने गुरु का दर्शन किया, परमात्मा ने उनको अपने साथ जोड़ लिया।

सारी मानवता को गलत रास्ते से बचाने के लिए ही सतगुरु ने तीर्थों पर जाने का उद्यम किया था। सतगुरु जी के साथ अनेकों सिख भी उस लंबे रास्ते में गए थे।

गुरु (अमरदास) जी पहले कुलखेत (**कुरुक्षेत्र**) पहुंचे। वह दिन लोगों के लिए गुरु-सतिगुरु से संबंध रखने वाला पवित्र दिन बन गया। अनंत लोग दर्शनार्थ आए। उनमें जोगी, नांगे संन्यासी, छः वेशों के साधु आदि शामिल थे। उन्होंने कई प्रकार के विचार गुरु जी के समक्ष पेश किए। फिर गुरु जी **यमुना नदी** पर पहुंचे और प्रभु के नाम का जाप करवाया। सरकारी महसूल एकत्र करने वाले भी भेंट रख कर गुरु जी को मिले। गुरु के सिखों को लगान वसूलने वालों ने बिना महसूल लिए नदी से पार करा दिया। हे भाई, जो मनुष्य गुरु के वचनों को मान कर जीवन पथ पर चलते हैं, यम रूपी महसूलिया उनके समीप नहीं आता है।

तीसरे स्थान पर गुरु जी **गंगा (हरिद्वार)** पहुंचे। वहां अजीब तमाशा हुआ। किसी भी महसूलिए ने किसी से भी आधी कौड़ी तक महसूल नहीं लिया। जब गुल्लकों में आधी कौड़ी भी न पाई गई तो महसूलिए हैरान हो कर कहने लगे कि सारी दुनियां भाग कर गुरु जी की शरण पड़ गई है। हम किस से महसूल मांगें? महसूल एकत्र करने वाले सोच विचार करके, अपनी गुल्लकें बंद करके, वहां से उठ कर चले गए।

नगर के प्रसिद्ध (प्रमुख) एकत्र हो कर आए। उन्होंने सतगुरु जी का आश्रय लिया। सतगुरु जी का पल्ला पकड़ा। उनको गुरु जी से पूछ कर यह

पता चल गया कि सुकदेव, प्रहलाद, श्री रामचंद्र आदि ने गोविंद, गोविंद कह कर प्रभु के नाम का सुमिरन किया था। यह (नाम सुमिरन) ही वास्तव में समृतियां व शास्त्र हैं। इस प्रकार सुकदेव, प्रहलाद व श्री रामचंद्र ने शरीर रूपी किले में वास करने वाले काम आदि पांच डाकुओं को मार कर, उन का अपने अंदर से निशान ही मिटा दिया था।

नगर वासियों ने गुरु जी के उपदेशों के द्वारा परमात्मा की भक्ति करने की निधि प्राप्त कर ली। वहां पर सदा कीर्तन होने लग गए। यही पंचजनों के वास्ते पुराणों के पाठ और पुन्यदान स्थापित हुए।

पूरा शबद इस प्रकार है :

तुखारी महला ४।।

नावणु पुरबु अभीचु, गुर सतिगुर दरसु भइआ।।
दुरमति मैलु हरी, अगिआनु अंधेरु गइआ।।
गुर दरसु पाइआ, अगिआनु अंधेरु गइआ।।
गुर दरसु पाइआ, अगिआनु गवाइआ, अंतरि जोति प्रगासी।।
जनम मरण दुख खिन महि बिनसे, हरि पाइआ प्रभु अबिनासी।।
हरि आपि करतै पुरबु कीआ, सतिगुरू कुलखेति नावणि गइआ।।
नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ।। १।।
मारगि पंथि चले, गुर सतिगुर संगि सिखा।।
अनदिनु भगति बणी, खिनु खिनु निमख विखा।।
हरि हरि भगति बणी प्रभु केरी, सभु लोकु वेखणि आइआ।।
जिन दरसु सतिगुर गुरू कीआ, तिन आपि हरि मेलाइआ।।
तीरथ उदमु सतिगुरू कीआ, सभ लोक उधरण अरथा।।
मारगि पंथि चले गुर सतिगुर संगि सिखा।।२।।

प्रथम आए-कुलखेति, गुर सतिगुरु पुरबु होआ।।

खबरि भई संसारि आए त्रै लोआ।।

देखणि आऍ तीनि लोक, सुरि, नर, मुनिजन सभि आइआ।।

जिन परसिआ गुरु सतिगुरू पूरा, तिन के किलविख नास गवाइआ।।

जोगी, दिगंबर, संनिआसी, खटु दरसन, करि गए गोसटि ढोआ।।

प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ।।३।।

दुतीआ जमुन गए, गुरि हरि हरि जपनु कीआ।।

जागाती मिले दे भेट, गुर पिछै लंघाइ दीआ।।

सभ छुटी सतिगुरू पिछै, जिनि हरि हरि नामु धिआइआ।।

गुर बचनि मारगि जो पंथि चाले, तिन जमु जागाती नेड़ि न आइआ।।

सभि गुरू गुरू जगतु बोलै, गुर कै नाइ लइऐ, सभि छुटकि गइआ।।

दुतीआ जमुन गए, गुरि हरि हरि जपनु कीआ।।४।।

त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ।।

सभ मोही देखि दरसनु गुर संत, किनै आढु न दामु लइआ।।

आढु दामु किछु पइआ न बोलक, जागातीआ मोहण मुंदणि पई।।

भाई हम करह किआ, किसु पासि मांगह, सभ भागि सतिगुर पिछै पई।।

जागाती आ उपाव सिआणप करि वीचारु डिठा,

भंनि बोलका सभि उठि गइआ।।

त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ।।५।।

मिलि आए नगर महा जना, गुर सतिगुर ओट गही।।

गुरु सतिगुरु गुरु गोविदु पुछि, सिम्रिति कीता सही।।

सिम्रिति सासत्र सभनी सही कीता, सुकि प्रहिलादि सिरी राम करि।।

गुर गोविंदु धिआइआ।।
देही नगरि कोटि पंच चोर वटवारे, तिन का थाउ थेहु गवाइआ।।
कीरतन पुराण नित पुंन होवहि, गुर बचनि नानकि हरि भगति लही।।
मिलि आए नगर महा जना, गुर सतिगुर ओट गही।।६।।

(पृ १११६-१७)

(ख) हरी राम तपे की पोल :

गोइंदवाल में हरी राम नाम का तपस्वी रहता था। अपने आप को योग मत से जोड़ता था। पर था गृहस्थी। लोभी, लालची और पाखंडी तपा ऐसे ही साधु संतों जैसा था जो धर्म की नकाब पहनकर श्रद्धालुओं की खून पसीने की कमाई से सुख साधन बटोर कर ऐश करते हैं। गुरु अमरदास जी का प्रचार इस तपे व इसकी श्रेणी के अन्य लोगों के लिए बहुत अवरोधक था। हराम की कमाई खाने के आदी को कठोर परिश्रम करने की बात कैसे रास आ सकती है? लोगों को धर्म-कर्म के जाल में फंसाने वाले कर्मकांडीय व जात अभिमानी तपे को प्रभु का नाम सुमिरन व शुभ कर्म करने का गुरमत सिद्धांत कैसे रास आ सकता था? अतः उसने यह प्रचार करना आरंभ कर दिया कि गुरु अमरदास जी सभी लोगों को एक स्थान पर लंगर सेवन करवा कर और सभी जातियों व मजहबों के लोगों को एक ही बाउली यानी जलकुंड में सामूहिक स्नान करने की प्रेरणा दे कर ब्राहमणी धर्म के मूल सिद्धांतों को तहस नहस किये जा रहे हैं। इसके साथ ही यह गोइंदे के पुत्रों तथा अन्य ब्राहमणों को गुरु जी के विरुद्ध भड़का रहा था।

इस पाखंडी तपे की पोल खोलने के लिए गुरु जी ने कौतुक रचा। उन्होंने कहा कि जो तथाकथित उच्च जातीय मनुष्य गुरु के लंगर में से भोजन सेवन करेगा, उसको एक रुपया प्रति दिन दिया जाएगा। तपे हरी राम को संदेश भी भेजा गया। फिर इस इनाम की रकम एक से बड़ा कर पांच रुपए कर दी

गई। तपे का मन तो इनाम लेने के लिए उतावला हो रहा था पर जाति अभिमानी लोगों में बनी अपनी साख उसको लंगर में जाने से रोक रही थी। दूसरी ओर वह रोज के पांच रुपए भी गंवाना नहीं चाहता था। उधर गुरु जी ने इनाम की रकम बढ़ा कर एक मोहर कर दी। तपे का लालची मन स्वनिर्मित धर्म नियमों को त्याग कर इनाम प्राप्त करने की योजनाएं सोचने लगा। उसने फैसला किया वह अपनी छोटी आयु के पुत्र को चोरी-चोरी लंगर स्थान में भेजेगा। अतः एक दिन बच्चे को दीवार फंदवा कर लंगर स्थान में भेजा गया। पर बच्चा दीवार फांदते हुए गिर गया और उसकी टांग टूट गई। दर्द से कराहते हुए उसने सब को बता दिया कि मोहर प्राप्त करने के लिए उसके पिता ने लंगर की पिछली दीवार से उसको अंदर भेजने का यत्न किया था। इस प्रकार तपे की पोल खुल गई और वह सारे नगर में एक पाखंडी साधु के तौर पर मशहूर हो गया। गुरु रामदास जी ने इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है।

तपा न होवै अंद्रहु लोभी, नित माइआ नो फिरै जजमालिआ।।

अगो दे सदिआ सतै दी भिखिआ ए नाही,

पिछो दे पछुताइ कै आणि तपै पुतु विचि बहालिआ।।

पंच लोग सभि हसण लगे, तपा लोभि लहरि है गालिआ।।

जिथै थोड़ा धनु वेखै, तिथै तपा भिटै नाही,

धनि बहुतै डिठै तपै धरमु हारिआ।।

भाई, ऐहु तपा न होवी बगुला है,

बहि साध जना वीचारिआ।।

सत पुरख की तपा निंदा करै

संसारै की उसतती विचि होवै,

ऐतु दोखै तपा दयि मारिआ।।

महा पुरखां की निंदा का वेखु जि तपे ने फलु लगा,

सभु गइआ तपे का घालिआ।।

बाहरि बहै पंचा विचि तपा सदाए।।

अंदरि बहै तपा पाप कमाए।।

हरि अंदरला पापु पंचा नो उघा कर वेखालिआ।।

धरमराइ जमकंकरा नो आखि छडिआ,

ऐसु तपे नो तिथै खड़ि पाइहु, जिथै महा महां हतिआरिआ।।

फिरि ऐसु तपे दै मुहि कोई लगहु नाही, ऐहु सतिगुरि है फिटकारिआ।।

हरि कै दरि वरतिआ, सु नानकि आखि सुणाइआ।।

सो बूझै जु दयि सवारिआ।।१।।

(सलोक गउड़ी की वार महला ४, पृ ३१५-१६)

(ग) गोइंदे के पुत्र की करतूतें व उसकी दुर्दशा :

गोइंदवाल नगर गोइदे मराहे की विनती पर बसाया गया था। गुरु के निवास स्थान के लिए भूमि उसने भेंट की थी। बाकी भूमि गुरु अंगद देव जी ने मोल खरीदी थी।

गुरु अमरदास जी के समय में गोइंदवाल सिखी के महान केंद्र के रूप में विकसति हुआ। इस से जाति - अभिमानी, समृतियों-शास्त्रों के अनुयाइयों और हरी राम तपे जैसे पाखंडी साधुओं की कोई पूछ-ताछ न रही। इन गुरमत के दोशियों ने मिल कर गोइंदा के पुत्र को उकसाया कि राज दरबार में शिकायत करें कि गुरु अमरदास जी ने उन की भूमि पर जबर्दस्ती कब्जा करके नगर का निर्माण कर दिया है। इसलिए जमीन वापिस दिलवाई जाए या हरजाना दिया जाए। उकसावे में आ कर गोंदे के पुत्र ने लाहौर दरबार में जा कर शिकायत की। गवर्नर ख्वाज़ा खिज़र खान निरीक्षण करने आया। वास्तविकता

का पता लगने पर उसने मुकदमा खारिज कर दिया। उसके साथ आया फौजदार ताहिर बेग गुरु अमरदास जी के व्यक्तित्व व उनके द्वारा जनकल्याण के लिए किये जा रहे कार्यों से इतना प्रभावित हुआ कि वह सिख ही बन गया।

गोइंदे के पुत्र ने अकबर के पास जा कर फरियाद की। इस काम के लिए उसने अपने एक चालाक नौकर को समझा बुझा कर और नीला, काला, मैला व गंदा कुचैला चोला पहनवाकर और दीनहीन फरियादी के रूप में अकबर की कचैहरी में पेश किया। उसका नौकर रास्ते में गुरु जी और सिखों के विरुद्ध बहुत ऊल-जलूल बोलता गया। अकबर ने जांच पड़ताल करवाई तो उसको पता चला कि चौधरी का मामला बिल्कुल ही झूठा और मनघड़ंत है। इसलिए उसने गोइंदे के पुत्र व उसके नौकर दोनों को फिटकारा और कचैहरी में से निकाल दिया। लोगों ने भी दोनों को लाहनतें दीं। ज़लील हो कर गोइंवाल पहुंचे तो नगर निवासियों ने दोनों को मुंह लगाने से भी इनकार कर दिया। गोइंदे के पुत्र के मन पर इस सब का इतना प्रभाव पड़ा कि वह बीमार पड़ गया। सगे संबंधियों ने भी मुंह फेर लिया। उसकी पत्नी व भतीजों ने उसको घर ला कर खटिया पर लंबा डाल दिया। गुरु रामदास जी कहते हैं कि सृजनहार परमेश्वर धन्य हैं जिन्होंने न जाने अपने आप बैठ कर सच्चा न्याय करवाया है। जो मनुष्य पूरे सतिगुरु की निंदा करता है, उसको सच्चा परमेश्वर स्वयं किये का फल भुगतवा कर ख्वार करता है। न्याय के ये अक्षर वही प्रभु कहता है जिसने स्वयं सारा संसार पैदा किया है।

उपरोक्त घटना का वर्णन गुरु रामदास जी गउड़ी की वार में उच्चारित नीचे अंकित शबद (सलोक) में वर्णन करते हैं जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पृ 306 पर अंकित है :

मलु जूई भरिआ नीला काला खिधोलड़ा,

तिनि वेमुखि वेमुखै नो पाइआ।।

पासि न देई कोई बहणि, जगत महि गूह पड़ि,

सगवी मलु लाइ मनमुखु आइआ।।

पराई जो निंदा चुगली नो वेमुखु करि कै भेजिआ,

ओथै भी मुहु काला दुहा वेमुखा दा कराइआ।।

तड़ सुणिआ सभतु जगत विचि भाई,

वेमुखु सणै नफरै पउली पउदी

फावा होइ कै उठि घरि आइआ।।

अगै संगती कुड़मी वेमुखु रलणा न मिलै,

ता वहुटी भतीजी फिरि आणि घरि पाइआ।।

हलतु पलतु दोवै गए, नित भुखा कूके तिहाइआ।।

धनु धनु सुआमी करता पुरखु है

जिनि निआउ सचु बहि आपि कराइआ।।

जो निंदा करे सतिगुर पूरे की,

सो साचै मारि पचाइआ।। ऐहु अखरु तिनि आखिआ,

जिनि जगतु सभु उपाइआ।।१।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०६)

(पद अर्थ : खिधेलड़ा - जुल्ला। गूह- गंद। तड़- तड़क, तुरत। **नफर** - नौकर। **पउली पउदी** - जूते पउते हैं। **फावा** - बउरा, पागल। **पचाइआ** - ख्वार किया। **अखरु** - वचन, न्याय का वचन। **तिनि** - उस प्रभु ने।)

(घ) सच्चे सतिगुरु की शोभा व गुरु-दोशियों की दुर्दशा :

जब गुरु नानक देव जी ने भाई लहणा जी को गुरगद्दी प्रदान करके गुरु अंगद बना दिया तो उनके अपने पुत्र बाबा श्री चंद व बाबा लखमी दास

जी ने गुरु पिता का वचन न माना और गुरु अंगद देव जी को पीठ दिखला दी (भाव गुरु स्वीकार नहीं किया) वह तो बल्कि गुरु अंगद देव जी को अपने घर का टहिलकार कह कर अपने मन की भड़ास निकालते रहे। इसी प्रकार जब गुरु अमरदास जी को गुरगद्दी प्राप्त हुई तो गुरू अंगद देव जी के सपुत्र बबा दातू जी व दासू जी को बहुत दुख हुआ। जाति अभिमानी व सिख लहर के अन्य विरोधी, इन घर के भेदियों व बागियों को और शह देते रहे। दासू जी ने तो खडूर साहिब में अलग गद्दी ही लगा ली थी। माता खीवी जी के समझाने पर भी नहीं माने। पर प्रभु कृपा से विहीन व कपटी संगी साथियों के सहारे गुरु होने का नाटक कुछ दिन भी न चला पाए। ईर्ष्या की ज्वाला में जलने के कारण दिमाग फिर गया और अंतत: तीसरे गुरु जी के चरणों में उपस्थित हो कर भूल क्षमा करवाई। दातू जी भी ईर्ष्या की ज्वाला में जलते रहे। गुरु बनने में वे भी नाकाम रहे।

गुरु रामदास जी ने इनकी दुर्दशा व राज दरबार में शिकायतें करने वाले जाति अभिमानियों व गोइंदे के पुत्रों की दशा अपनी आंखों से देखी थी। गुरमति विरोधियों के जी तोड़ यत्नों के बावजूद गुरु साहिब की शोभा निरंतर बढ़ती रही और सिख लहर और अधिक जोर पकड़ती गई। उनके मन पर इस बात का खासा असर हुआ और उन्होंने बाणी में स्थान-स्थान पर गुरु-निंदकों की अंतिम दुर्दशा और गुरु यश के फैलने का वर्णन व गुरु की प्रशंसा की है। कुछ उदाहरणें इस प्रकार हैं :

होदै परतखि गुरु, जो विछुड़े, तिन कउ दरि ढोई नाही।।
कोई जाइ मिलै तिन निंदका, मुह फिके थुक थुक मुहि पाही।।
जो सतिगुरि फिटके, से सभ जगति फिटके, नित भंभल[illegible]ाही।।
जिन गुरु गोपिआ आपणा, से लैदे ढहा फिराही।।
तिन की भुख कदे न उतरै, नित भुखा भुख कूकाही।।

ओना दा आखिआ को ना सुणै, नित हउले हउलि मराही।।
सतिगुर की वडिआई, वेखि न सकनी, ओना अगै पिछै थाउ नाही।।
जो सतिगुरि मारे, तिन जाइ मिलहि, रहदी खुहदी सभ पति गवाही।।
ओइ अगै कुसटी गुर के फिटके, जि ओसु मिलै तिसु कुसटु उठाही।।
हरि तिन का दरसनु ना करहु, जो दूजै भाइ चितु लाही।।
धुरि करतै आपि लिखि लिखि पाइआ, तिसु नालि किहु चारा नाही।।
जन नानक नामु अराधि तू, तिसु अपड़ि को न सकाही।।
नावै की वडिआई वडी है, नित सवाई चढ़ै चढ़ाही।।२।।

(गउड़ी की वार, महला ४, पृ ३०८-९)

गुरु साहिब कहते हैं कि सतगुरु के प्रत्यक्ष होते हुए भी जो निंदक गुरु से बिछुड़े रहते हैं उनको दरगाह में कोई आश्रय नहीं मिलता है। यदि कोई भी उनका संग करता है उसका भी मुंह काला होता है और उसे भी फिटकार ही पड़ती हैं। जो मनुष्य गुरु से बिछुड़े हुए हैं वे संसार में भी फिटकारे हुए हैं और सदा विचलित ही रहते हैं। जो अपने गुरु की निंदा करते हैं, वे (मानो) सदा दहाड़ मारते रहते हैं। उनकी तृष्णा कभी नहीं समाप्त होती और वे सदा भूख-भूख ही चीखते रहते हैं। कोई उनकी बात पर विश्वास नहीं करता, इसलिए वे सदा चिंतातुर ही रहते हैं।

जो मनुष्य सतगुरु की महिमा को सहार नहीं सकते उन को लोक परलोक में टिकाना नहीं मिलता। जो मनुष्य गुरु से बिछुड़े हुओं को जा मिलते हैं, वे भी, अपनी जो थोड़ी-बहुत इज्जत होती है, उसे गंवा लेते हैं। गुरु से टूटे हुए तो आगे ही कोहड़ी हैं। जो मनुष्य उनकी संगत करता है उसको भी कोहड़ लग जाता है। इसलिए भगवान के लिए उनका दर्शन भी न करो जो माया के मोह में फंसे होते हैं। उनको सुधारने के लिए कोई उपाय कारगर नहीं

होता क्योंकि करतार ने आरंभ से ही (उन के किये गए कर्मों के अनुसार) इस तरह के दूसरे भाव के संस्कार ही उनके मन में लिख कर डाल दिए हैं।

हे नानक, तूं नाम का जाप कर ! नाम का जाप करने वाले की बराबरी कोई भी नहीं कर सकता। नाम की महिमा बहुत बड़ी है और दिनो दिन बढ़ती ही जाती है।

संज होंदै गुरु बहि टिकिआ, तिसु जन की वडिआई वडी होई।।
तिसु कउ जगतु निविआ, सभु पैरी पइआ, जसु वरतिआ लोई।।
तिसु कउ खंड ब्रहमंड नमसकारु करहि,
जिस कै मसतकि हथ धरिआ गुरि पूरै, सो पूरा होई।।
गुर की वडिआई नित चढ़ै सवाई, अपड़ि को न सकोई।।
जनु नानकु हरि करतै आपि बहि टिकिआ,
आपे पैज रखै प्रभु सोई।।३।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०६)

जिस मनुष्य को सतिगुरू ने अपने जीवन काल में स्वयं ही गुरू प्रस्थापित किया हो, उसकी बहुत शोभा होती है। उसके सम्मुख सारा संसार नम्न करता है और उसके पांव लगता है। उसकी शोभा सारे संसार में फैल जाती है। जिस के माथे पर सतगुरू जी ने स्वयं हाथ रखा हो (भाव, जिसकी सहायता सतगुरू जी ने की) वह सभी गुणों में पूर्ण हो गया और सभी खंड-ब्रहमंड के जीव-जंतु उसको नमस्कार करते हैं। सतगुरू की महानता दिनो-दिन बढ़ती है। कोई मनुष्य उसकी बराबरी नहीं कर सकता। क्योंकि अपने सेवक नानक को सृजनहार प्रभु ने स्वयं सम्मान प्रदान किया है और इस कारण प्रभु स्वयं ही लाज रखता है।

गुरू रामदास जी अपने विचारों का सम इस प्रकार प्रकट करते हैं :

जिस नो साहिबु वडा करे सोई वड जाणी।।

जिसु साहिब भावै तिसु बखसि लऐ, सो साहिब मन भाणी।।

जे को ओस दी रीस करे सो मूढ़ अजाणी।

(गउड़ी की वार, पृ. 302)

(ङ) बाबा पृथी चंद को उपदेश :

गुरु रामदास जी का बड़ा पुत्र बाबा पृथी चंद, सांसारिक वस्तुओं - धन, पदार्थ व जायदाद आदि व मान सम्मान का बहुत भूखा था। वह समझता था कि गुरगद्दी प्राप्त करने के पश्चात वह भी सब कुछ प्राप्त कर सकता है। पर जब गुरु रामदास जी ने गुरिआई की जिम्मेवारी गुरु अर्जुन देव जी को प्रदान कर दी तो बाबा पृथी चंद को बहुत बड़ा धक्का लगा। गुस्से में पागल हुआ वह गुर-पिता के साथ ही लड़ पड़ा। गुरु रामदास जी ने उसको समझाया कि धन की खातिर पिता के साथ लड़ना ठीक नहीं जिस धन का तूं अहंकार करता है वह हमेशा साथ नहीं देता है और धन के मोह के कारण अंतत: पछताना पड़ता है। इसलिए प्रभु के नाम का जाप करना चाहिए और गुरु के उपदेश को मानना चाहिए। इससे मानसिक दुख क्लेश दूर हो जाते हैं।

उपरोक्त उपदेश को गुरु रामदास जी ने *सारंग राग* में नीचे लिखे शबद में बयान किया है जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पृ १२०० पर अंकित है :

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप।।

जिन के जणे बडीरे तुम हउ, तिन सिउ झगरत पाप।।१।। रहाउ।।

जिसु धन का तुम गरबु करत हउ सो धनु किसहि न आप।।

खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु, तउ लागै पछुताप।।१।।

जो तुमरे प्रभ होते सुआमी हरि, तिन के जापहु जाप।।

उपदेसु करत नानक जन तुम कउ

जउ सुनहु तउ जाइ संताप।।२।।१।।७।।

(सारंग महला ४, पृ १२००)

(पद अर्थ : बडीरे - पाल पोस कर बड़े किए हुए)

***

(12) संपूर्ण जीवन पर एक दृष्टि

धनु धनु रामदास गुरु

श्री गुरु रामदास जी का जीवन गुरु, गुरमति-विचारधारा और सिख जीवन शैली की जीती जागती करामात है। एक अनाथ बालक का करोड़ों सिख श्रद्धालुओं को अगवाई देने के योग्य बनना, इस करामात का पूरा होना है।

आप सात साल की आयु में (गुरु) अमरदास जी के संपर्क में आए। वह भी कुछ समय पहले ही गुरु अंगद देव जी की शरण में आए थे। कुछ दिनों में ही वे गुरमत की रंगत में पूरी तरह रम गए थे। उन के गुरमुखी जीवन का, बालक जेठा जी के मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।(गुरु) अमरदास जी के प्यार व हमदर्दी ने भी उनको गुरमत मार्ग से जोड़ने में बहुत सहायता की। लगभग 12 वर्ष की आयु में गुरु अंगद देव जी की संगत प्राप्त हो गई जिसने सोने पर सुहागे वाला काम किया। गुरमत मार्ग के पक्के राही बन गए - सेवा व संघर्ष द्वारा अपने व्यवहारिक जीवन को ढालने का उद्देश्य बन गया। हर पल जीवन को गुरु उपदेशों के अनुसार ढालने का यत्न करते। 40 वर्षों की आयु तक सेवा व व्यवहारिक जीवन संघर्ष वाली सत्य की राह पर चलते रहे और अंततः सिख संसार के गुरु बने। अपने सात सालों के गुरु काल में आपने सिख भाईचारे को कौम के रूप में संगठित करने और आर्थिक पक्ष से मजबूत करने के लिए विशेष यत्न किये। आप के संघर्षमय जीवन पर दृष्टि डालने पर आप के व्यक्तित्व के नीचे लिख पक्ष उभर कर सामने आते हैं :

(क) स्वभाव

आप बचपन से ही मृदुभाषी थे। नम्रता, दया, प्रेम, उदारता आदि आप जी के स्वभाव के विशेष गुण थे। आदेश मानने की परीक्षा के समय जब गुरु अमरदास जी ने जान बूझ कर बार-बार मंच बनाने के लिए कहा तो मन में ज़रा भी गुस्सा नहीं किया बल्कि बहुत नम्रता सहित आपने गुरु अमरदास जी के चरण पकड़ लिए और कहने लगे, ''मैं तो अनजान और भूलने वाला हूं। आप कृपालु हो। बार-बार भूल क्षमा करते हो। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं आप के आदेश को सही तरह से समझ नहीं पाता।''

जब गुरु नानक देव जी के सपुत्र बाबा श्रीचंद जी मिलने को आए तो भी आप जी ने परले दर्जे की नम्रता दिखलाई। भले ही आप उस समय गुरगद्दी परा सुशोभित थे और लाखों सिखों के दिलों पर राज्य करते थे। जब बाबा जी ने कहा कि इतना बड़ा दाहड़ा क्यों बढ़ा रखा है तो आपने बहुत नम्रता सहित उत्तर दिया : ''आप जैसे महापुरुषों के चरण झाड़ने के लिए।'' इन वचनों ने बाबा जी के मन पर जादुई असर किया। वे कहने लगे, ''आपकी महिमा तो पहले ही बहुत सुनी थी पर प्रत्यक्ष रूप में अब देख ली है। गुरगद्दी आपने नम्रता व प्रेम की मूरत होने के कारण पाई है।''

आप जी के बारे में इस प्रकार की साखियों की जानकारी प्राप्त करके ही **ग्रीनलीज़** ने कहा था कि वे प्यार के पैगंबर थे। हर स्थान पर उन्होंने मीठी व सुंदर सुर में यही आहवान किया कि प्रभु की भक्ति में ही सब का मैत्री भाव है।

(ख) दृढ़ता .

जहां आपके मन में नम्रता, धैर्य व प्यार के भाव कूट-कूट कर भरे

पड़े हैं, वहीं सत्य कहने का साहस और दृढ़ता भी विद्यमान थी। गुरमत सिद्धांतों का बहुत बेबाकी से प्रचार करते थे। आप ने अपनी बाणी में दुष्टों, गुर-निंदकों, दोशियों, साजशियों, स्वार्थियों, ढीठों, पाजियों, पारखंडियों, भ्रम में पड़े रहने वालों, मनमतियों को खूब खरी-खरी सुनाई हैं और किसी की रत्ती भर भी प्रवाह नहीं की।

आप अपने सपुत्र पृथी चंद की साजशी रुचियों से भली भांति परिचित थे। यदि उसने माया के मद में कुछ गलत वचन बोले तो उसको खरी खरी सुनाई कि जिस धन का तूं अहंकार करता है, वह कभी किसी का नहीं हुआ। इसलिए धन की खातिर पिता के साथ लड़ना उचित नहीं। धन के मोह में अंततः पछताना ही पड़ता है। यदि मानसिक दुखों व क्लेशों का नाश करना है तो प्रभु के नाम का जाप किया करो।

गुरगद्दी के मालिक बनने से पूर्व आपको गुरु अमरदास जी ने गुरमति का पक्ष पेश करने के लिए लाहौर में अकबर के दरबार में भेजा था क्योंकि जाति अभिमानियों, कर्मकांडियों और गुरमत विचारधारा के विरोधियों ने गुरु अमरदास जी व उनके द्वारा प्रचारित किये जा रहे धर्म सिद्धांतों के विरुद्ध राजदरबार में एक लंबा-चौड़ा शिकायत नामा भेजा था। (गुरु) रामदास जी ने सारे आक्षेपों का बहुत विस्तार सहित, धैर्य व निर्भयता से उत्तर दिया और गुरमत-सिद्धांतों की व्याख्या की। जहां विरोधियों को हार का मुंह देखना पड़ा, वहीं अकबर के मन में सिख सतगुरु साहिबान व गुरमत सिद्धांतों के प्रति प्यार जागृत हुआ।

(ग) आदर्श सेवक :

गुरु रामदास जी ने एक सिख के रूप में सची व निर्मल सेवा के पदचिन्ह स्थापित किए हैं। बारह वर्ष की आयु से ही आप गुरु अंगद देव जी

के दर्शनों को खडूर साहिब आने लग गए थे। संगत की सेवा बहुत चाव से करते थे। सेवा में से अगम्य आनंद प्राप्त करते थे।

बाउली की रचना के समय आपने खुदाई द्वारा टोकरियों से मिट्टी बाहर निकालने का काम बहुत लगन और चाव से किया था। भले ही उस समय तक उनका विवाह गुरु अमरदास जी की सपुत्री बीबी भानी के संग हो चुका था पर आपने सांसारिक रिश्ते की जरा भी प्रवाह नहीं की और एक सच्चे सिख के रूप में निष्काम सेवा करते रहे। यदि लाहौर से आए रिश्तेदारों ने सुसराल के घर में टोकरी ढोने पर आपत्ति की तो गुरु अमरदास जी को भी कहा कि आपने हमारे शरीक भाई से इतने नीच काम करवा कर हमारा अपमान किया है। तो आपने शरीकों द्वारा गुरु पातशाह से क्षमा मांगी और कहा, ''यह तो अनजान हैं। इन को क्या पता कि सेवा की निधि तो बड़े भाग्यवान लोगों को मिलती है।''

(घ) वेपरवाह :

श्री गुरु रामदास जी के जीवन से वेपरवाही की अनेकों घटनाओं का पता चलता है। इस का वर्णन करते हुए प्रिंसिपल सतिबीर सिंघ लिखते हैं : सेठ जगत राम ने कैंठा दिया, आपने जरूरतमंदों को उसी समय दे दिया। एक माई ने चाव से मोतियों की माला दी, आपने राह में बैठे मलंग को दे दी। अकबर ने मोहरें भेंट कीं तो आप ने उस समय उन्हें बांट दिया। धन, माया बांट दी। गोलक चढ़ी, उसी समय लुटवा दी। रसद आई, लोगों में बंटवा दी। शहर के वासियों को कहा, सब कुछ ही वे संभाल लें। यह अलग बात है कि उन (वासियों) ने कहा कि हम ने तो आपके ही राज्य में बसना है। हम पर कृपा करो। आप बांटते ही रहे, लोग आनंद लेते रहे। तो ही तो हर जुबान पर यह कहावत चढ़ गई है :

राज करें जहि आप गुरु तहि किउ ना अनंद सों लोक बसाहीं।।

(ङ.) **गरीबों के सहायक :**

श्री गुरु नानक देव जी पदचिन्ह स्थापित कर गए थे :

नीचा अंदरि नीच जाति, नीची हू अति नीचु।।

नानकु तिन कै संगि साथि, वडिआ सिउ किआ रीस।।

बाकी सतगुरु साहिबान ने भी इसी आशय का प्रचार किया और इसको व्यवहारिक रूप देने का यत्न करते रहे। राजाओं, रजवाड़ों के अत्याचारों के विरुद्ध लोगों को संगठित करना और गरीबों, बेसहारों पर अत्याचारों का शिकार हो रहे लोगों की रक्षा करना, गुरु घर की रीति ही बन गई थी। गुरु रामदास जी ने भी इस विचारधारा पर पूरी तरह पहरा दिया। प्रसिद्ध विद्वान डाक्टर गोकल चंद नारंग लिखते हैं, 'गुरु साहिब ने रजवाड़ों की मित्रता हासिल करने का कभी यत्न नहीं किया और न ही उन्होंने बादशाहों के संरक्षण की मांग की। उनके सर्वसाझे नियम, ऊंच नीच, अमीर-गरीब सब को आकर्षित करते थे और उनके धर्म के दरवाजे सभी दीन दुखियों व दलित लोगों के लिए खुले थे।'' (ट्रांस्फार्मेशन आफ सिखइज़्म)

(च) चढ़दीकला की मूर्ति :

श्री गुरु रामदास जी पचपन में ही अनाथ हो गए थे। सात वर्ष की आयु तक आपके माता पिता दोनों ही परलोक गमन कर गए। सगों ने मुंह फेर लिया। पूरे लाहौर में किसी ने भी सहायता न की। एक बहन व एक भाई को पालने की ज़िम्मेवारी भी सिर पर थी। नानी चाहे उन को ननिहाल (बासरके) ले आई थी पर वह वेचारी भी तो गरीब ही थी।

मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ने पर भी आपने उत्साह नहीं छोड़ा और

चढ़दी कला में विचरण करते रहे। जीवन निर्वाह के लिए घुंगणियां (गेहूं या चने उबले हुए) बेचकर रोजी रोटी कमाने लगे। जीवन संघर्ष में पूरी तनदेही से कूद पड़े। सब्र संतोष में रह कर जीवन का अति विषम समय गुजार लिया। किसी के आगे भी सहायता के लिए गुहार नहीं की।

गुरु साहिब का जीवन निराश मनुष्यों को अगवाई प्रदान करता रहेगा और संघर्ष की प्रेरणा देता रहेगा।

(छ) विरासत की संभाल करने वाले :

श्री गुरु रामदास जी पहले सतगुरु जी से बहुत प्रभावित हुए थे। इसीलिए आप की बाणी में गुरु की माहनता का स्थान-स्थान पर बहुत भावपूर्ण वर्णन आता है। इसके साथ ही आप जी ने पहले सतगुरु जी, विशेष करके श्री गुरु अमरदास जी के जीवन में से कुछेक घटनाओं को अपनी बाणी में अंकित किया है। फारस्टर आप को विरासत को संभालने वाले के तौर पर याद करता है।

(ज) साहित्यकार व संगीत प्रेमी :

गुरु जी द्वारा रची गई बाणी, आपको एक महान साहित्यकार, संगीत प्रेम व राग कला की बारीकियों को समझने वाले के रूप में प्रकट करती है। जहां आप जी ने आकार के दृष्टिकोण से अनंत बाणी की रचना की है, वहीं रूप के पक्ष से भी उच्च स्तरीय रचना की है। बाणी में आपने पहरे, वणजारा, करहले, घोड़ियां, सोहिले व कई और छंदों का प्रयोग किया है। मूल रूप में आप ढाडी थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बीच की 22 वारां में से 8 वारां आप जी ने लिखी हैं। वारां में युद्ध का वर्णन होता है। शूरवीरों की विजय का प्रदर्शन किया जाता है और कायर की हार। गुरु जी ने अपनी वारां में गुरु शूरवीरों की विजय प्रदर्शित की है और निंदकों, दोशियों दुष्टों, चुगलखोरों की हार। गुरमुख को

जीतते हुए और मनमुख को हारते हुए बताया है।

गुरू साहिब शबद घड़ने में भी विशेष अनुभव रखते थे और सुजान जौहरी की भांति शब्दों को नगों की तरह उचित स्थान पर जड़ देते थे। कुछेक शब्द ऐसे हैं जो केवल उन्होंने ही प्रयोग किये हैं। जैसे जहारनवीं, कुवलीअपड़ी, उमरथल, सुआवगीर और गल-फरोश। उनकी कई पंक्तियां स्वतः ही मुंह पर चढ़ जाती हैं और उन में जीवन की अटल सच्चाइयों का वर्णन होता है। कुछ उदाहरणें इस प्रकार हैं :

ओना पासि दुआसि न भिटीऐ,

जिन अंतरि क्रोधु चंडाल।।३।।

(सिरी राग महला ४, पृ ४०)

सो डरै जि पाप कमावदा, धरमी विगसेतु।। (पृ ८४)

जैकार कीओ धरमीआं का, पापी कउ डंडु दीओइ।। (पृ ८९)

हम जंत विचारे किआ करह, सभु खेलु तुम सुआमी।। (पृ १६७)

हम रुलते फिरते कोई बात ना पूछता,

गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे।। (पृ १६७)

मन करहला मेरे पिआरिआ, विचि देही जोति समालि।। (२३५)

सतिगुरु सभना दा भला मनाइदा, तिसदा बुरा किउ होइ।। (३०२)

कूड़ु ठगी गुझी ना रहै, मुलंमा पाजु लहि जाइ।। (३०४)

विणु काइआ जि होरथै धनु खोजदे, से मूढ़ बेताले।। (पृ ३०९)

जिना अंदरि उमरथल, सेई जाणनि सूलीआ।। (३११)

अंमृत सरु सतिगुरु सतिवादी

जितु नातै कऊआ हंसु होहै।। (पृ ४९३)

गुरमति मनु ठहराईऐ मेरी जिंदुड़ीए,

अनत न काहू डोले राम।। (पृ ५३८)

जो तिसु भावै नानका, साई गल चंगी।। (७२६)

जो बिनु परतीती कपटी कूड़ी कूड़ी अखी मीटदे,

उन का उतरि जाइगा झूठु गुमानु।।३।। (पृ ७३४)

इहु सरीरु करम की धरती

गुरमुखि मथि मथि ततु कढईआ।। (पृ ८३४)

बाणी गुरू गुरू है बाणी, विचि बाणी अंमृतु सारे।। (पृ ९८२)

आप राग विद्या के भी माहिर थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रयोग किए गए 31 रागों में से आपजी ने 30 रागों में बाणी की रचना की है। (31वें राग जैजावंती में केवल श्री गुरु तेग बहादुर जी ने ही बाणी रची है)। यह राग की गहरी सूझ ही थी जिसने आपकी बाणी को लयमय, मधुर और संगीतमय बनाया। इसीलिए **प्रो पूर्ण सिंघ** जी आप की बाणी को प्यार की नदी कहते हैं। वे और आगे कहते हैं कि उनकी बाणी विरह पैदा करती है और प्रीतम के देश को साथ ले जाती है।

(झ) कौमी निर्माता :

सिख कौम की नींव श्री गुरु नानक देव जी ने रख दी थी। बाद के गुरु साहिबान ने उस पर कौमी महल का निर्माण किया।

गुरु रामदास जी के समय पर कौमी निर्माण का जो सब से महान काम हुआ वह था सिखों के केंद्रीय शहर अमृतसर को बसाना। गुरु अमरदास जी के आदेशानुसार आप ने स्वयं जमीन खरीदी, निर्माण की योजना बनाई और अपनी निगरानी में शहर का निर्माण कार्य करवाया। रिहायशी मकानों के अतिरिक्त अलग-अलग बाजार और संतोखसर व अमृतसर सरोवर बनवाए। अलग-अलग कारोबार करने वालों को यहां पर ला कर बसाया और इस तरह शहर को व्यापारिक केंद्र और औद्योगिक नगर के रूप में विकसित किया। इस से सिखों को भी यहां आ कर बसने की प्रेरणा की। इस प्रकार आपने शहर को सिखों की धार्मिक राजधानी का रूप दिया। **लतीफ** लिखता है कि गुरु रामदास जी के अमृतसर का निर्माण करने से कौम का भविष्य ही संवर गया है।

कौम के निर्माण तथा उज्जवल भविष्य के लिए मजबूत आर्थिक आधार का होना जरूरी है। यह आधार आप ने शहर को व्यापारिक केंद्र और लघु उद्योगों की नगरी बना कर प्रदान किया। इसके साथ ही मसंद प्रथा जारी की। मसंद सारे देश में फैल गए। धर्म प्रचार करने के अतिरिक्त, क्षेत्र की

संगत की कारभेंट गुरु दरबार (केंद्रीय खजाने) में पहुंचाते और गुरु साहिब के आदेशों को संगत तक पहुंचाते। इन्होंने सिखों को कौमी सूत्र में बांधने में विशेष योगदान किया। गुरु जी ने सिखों को एक दूसरे की आर्थिक व अन्य सभी प्रकार की सहायता करने का उपदेश दिया। आपने कहा कि सारे मिल कर गरीब सिख की आर्थिक सहायता करो ताकि वह अपना जीविकोपार्जन कर सके। उसकी सफलता के लिए अरदास भी करो।

गुरु जी ने धार्मिक मर्यादा को मजबूत किया। सिख के नित्यकर्म को निश्चित किया। सूही राग में लावां की बाणी उचार कर सिख कौम को ब्राहमण की अधीनता से बचा लिया।

गुरु जी के इन यत्नों और धर्म प्रचार के फलस्वरूप जहां सिखों की संख्या बहुत बढ़ी, वहीं सिखों में कौमीयत की भावना अधिक बलवान हुई। मैकालिफ लिखता है कि श्री गुरु रामदास जी के समय पर सिखी चारों दिशाओं में फैली। राजा रंक, शाह-व्यापारी, बनिए, दुकानदार, बनजारे व फेरी लगाने वाले मजदूर व किसान, दूर व समीप, हर स्थान पर सिखी के दायरे में आ गए।

गुरु रामदास जी की महानता अगम्य है। एक मनुष्य संपूर्ण सतगुरु की गहराई को नहीं पा सकता। हां हम भट कीरत जी की तरह सतगुरु जी के आगे इस प्रकार अरदास जरूर कर सकते हैं :

हम अवगुणि भरे, ऐकु गुणु नाही
अंमृतु छाडि, बिखै बिखु खाई।।
माया मोह भरम पै भूले, सुत दारा सिउ प्रीति लगाई।।
इकु उतम पंथु, सुनिओ गुर संगति, तिह मिलंत, जम त्रास मिटाई।।
इक अरदासि भाट कीरति की, गुर रामदास, राखहु सरणाई।।४।।५८।।

(पृ 1406)

***

ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ ਦੇ ਉਦੇਸ਼

- ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਗੁਰਮਤਿ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹ ਕਰਾਉਣਾ ਅਤੇ ਸ਼ਬਦ ਗੁਰੂ ਦੇ ਲੜ ਲਾਉਣਾ।
- ਸਿੱਖ ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਦਾ ਲਾਸਾਨੀ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹ ਕਰਵਾ ਕੇ ਪਤਿੱਤਪੁਣਾ ਤੇ ਨਸ਼ਿਆਂ ਦੇ ਮਾਰੂ ਰੋਗਾਂ ਤੋਂ ਬਚਾਉਣਾ।
- ਚੰਗੇ ਪੜ੍ਹੇ ਲਿਖੇ, ਟਰੇਂਡ ਤੇ ਜੀਵਨ ਵਾਲੇ ਨਿਸ਼ਕਾਮ ਪ੍ਰਚਾਰਕ ਤਿਆਰ ਕਰਨ ਲਈ ਹਰ ਸ਼ਹਿਰ ਵਿਚ 'ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ' ਵਲੋਂ ਦੋ ਸਾਲਾ ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕੋਰਸ ਕਰਵਾਉਣ ਲਈ ਫ੍ਰੀ ਕਲਾਸਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਬੰਧ ਕਰਨਾ।
- ਹਰ ਘਰ ਵਿਚ ਗੁਰਮਤਿ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਪ੍ਰਪੱਕ ਕਰਵਾਉਣ ਲਈ ਕਾਲਜ ਵਲੋਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ ਮਾਸਿਕ ਮੈਗਜ਼ੀਨ 'ਸਿੱਖ ਫੁਲਵਾੜੀ' ਪੰਜਾਬੀ, ਹਿੰਦੀ ਨੂੰ ਘਰ ਘਰ ਪਹੁੰਚਾਉਣਾ ਅਤੇ ਦੋ ਸਾਲਾ ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਪੱਤਰ ਵਿਹਾਰ ਕੋਰਸ, ਘਰ ਬੈਠੇ ਬਿਠਾਏ ਡਾਕ ਰਾਹੀਂ ਕਰਵਾਉਣਾ।
- ਸਕੂਲਾਂ, ਕਾਲਜਾਂ, ਪਿੰਡਾਂ, ਸ਼ਹਿਰਾਂ ਵਿਖੇ ਕਾਲਜ ਵਲੋਂ ਤਿਆਰ ਪ੍ਰਚਾਰਕਾਂ ਰਾਹੀਂ ਆਦਰਸ਼ਕ ਗੁਰਮਤਿ ਸਮਾਗਮ ਕਰਨੇ।
- ਗੁਰਮਤਿ ਲਿਟਰੇਚਰ ਦੀ ਖੋਜ ਕਰ ਕੇ ਬੱਚਿਆਂ ਤੇ ਵੱਡਿਆਂ ਵਾਸਤੇ ਛਪਵਾ ਕੇ ਫ੍ਰੀ ਅਤੇ ਲਾਗਤ ਮਾਤਰ ਕੀਮਤ ਤੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਹਿੱਤ ਵੰਡਣਾ।

ਨੋਟ : ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ' ਨਿਰੋਲ ਧਾਰਮਿਕ ਜਥੇਬੰਦੀ ਹੈ। ਇਸਦਾ ਸਿਆਸਤ ਜਾਂ ਕਿਸੇ ਧੜੇਬੰਦੀ ਨਾਲ ਕੋਈ ਸੰਬੰਧ ਨਹੀਂ ਹੈ।

ਉਪਰੋਕਤ ਉਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਲਈ ਆਪ ਜੀ ਦਾ ਸਹਿਯੋਗ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਾਂ।

ਫ੍ਰੀ ਲਿਟਰੇਚਰ ਫੰਡ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਹਿੱਸਾ ਪਾਓ ਜੀ

ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ, ਲੁਧਿਆਣਾ ਨੇ ਹਰ ਸਿੱਖ ਘਰ ਵਿੱਚ ਫ੍ਰੀ ਧਾਰਮਿਕ ਲਿਟਰੇਚਰ ਪਹੁੰਚਾਉਣ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਹਰ ਮਹੀਨੇ 60,000 ਦੀ ਗਿਣਤੀ ਵਿੱਚ ਗੁਰਬਾਣੀ, ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਤੇ ਰਹਿਤ ਮਰਯਾਦਾ ਦੇ ਕਿਸੇ ਪਹਿਲੂ ਤੇ ਲਿਹਰੇਚਰ ਛਾਪ ਕੇ ਵੰਡਿਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਧਰਮ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦੀ ਇਸ ਮਹਾਨ ਸੇਵਾ ਵਿੱਚ ਹਿੱਸਾ ਪਾਉਣ ਲਈ ਹਰ ਪਾਠਕ ਨੂੰ ਬੇਨਤੀ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਆਪ ਇਹ ਲਿਟਰੇਚਰ 75 ਰੁਪਏ ਪ੍ਰਤੀ ਸੈਂਕੜਾ ਭੇਜ ਕੇ ਵੀ ਮੰਗਵਾ ਸਕਦੇ ਹੋ ਅਤੇ ਸੰਗਤਾਂ ਵਿੱਚ ਵੰਡ ਸਕਦੇ ਹੋ।

ਫ੍ਰੀ ਲਿਟਰੇਚਰ ਮੰਗਵਾਉਣ ਤੇ ਮਾਇਆ ਭੇਜਣ ਦਾ ਪਤਾ

ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਕਾਲਜ (ਰਜਿ:)

1051, ਕੂਚਾ 14, ਫ਼ੀਲਡ ਗੰਜ, ਲੁਧਿਆਣਾ - 8

ਸਬ ਆਫ਼ਿਸ : A - 143, ਫ਼ਤਹਿ ਨਗਰ, ਨਵੀਂ ਦਿੱਲੀ - 18